Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

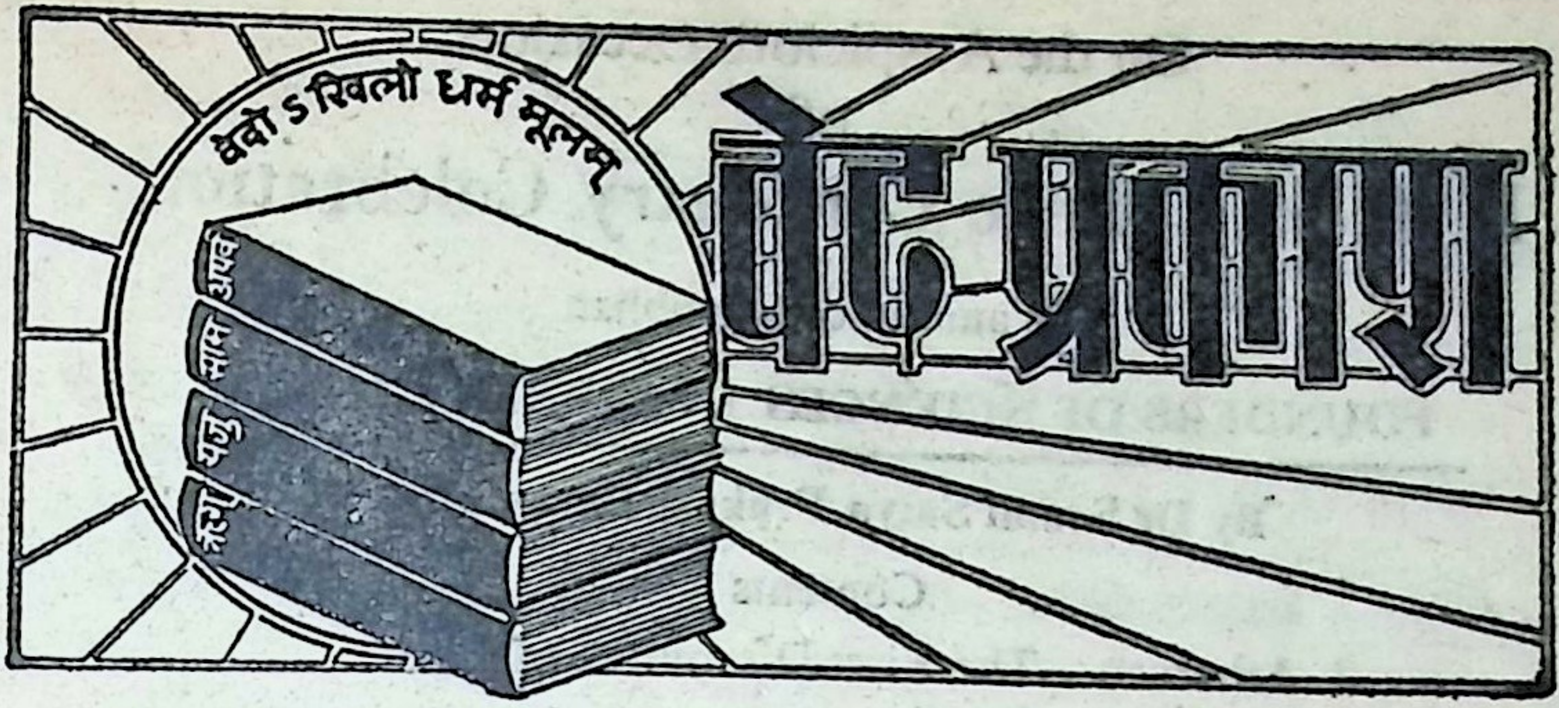

गायत्री महिमा

गायत्री-मन्त्र भारतीय संस्कृति का प्राण है। चारों वेदों का निचोड़ है। गय् प्राणों को कहते हैं, प्राणों की रक्षा करने के कारण ही इसे गायत्री कहते हैं।

'गयान् प्राणान् त्रायते सा गायत्री'

गायत्री के तीनों अक्षरों में गंगा-यमुना और त्रिवेणी का समावेश है। जिस प्रकार नदियों में गंगा की महिमा सर्वोपरि है, उसी प्रकार गायत्री के समान कोई मन्त्र नहीं है।

गायत्रीसमो मंत्रो न भूतो न भविष्यति।

गायत्री मंत्र के अक्षरों का गुम्फन इस प्रकार हुआ है कि जिसके जप मात्र से समस्त गुह्य ग्रंथियाँ जाग्रत् हो जाती हैं और मनुष्य लघु से विभु बन जाता है।

अक्षराणां तु गायत्र्या गुम्फनं ह्यस्ति तद्विधम्।
भवन्ति जागृता येन सर्वा गुह्यास्तु ग्रन्थयः॥

गायत्री जप से मनुष्य को समस्त भौतिक एवं आध्यात्मिक सुख प्राप्त हो जाते हैं जिसकी वह कामना करता है।

दैन्यरुक्शोकचिन्तानां विरोधाक्रमणापदाम्।
कार्यं गायत्र्यनुष्ठानं भयानां वारणाय च॥

दीनता, रोग, शोक, विरोध, आक्रमण, आपत्तियाँ तथा भय आदि के निवारण के लिए गातत्री का अनुष्ठान करना चाहिए। इससे बाधाओं से छुटकारा मिलता है। गायत्री उपासना हमें प्रतिदिन नियमपूर्वक करनी चाहिए तभी सफलता जल्दी मिलती है।

किसी की गायत्री उपासना कभी निष्फल नहीं जाती, जिस भी परिस्थिति में हों उसी प्रकार ही जप करना चाहिए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

On the Auspicious Occasion
of
D. A. V. College Centenary Celebration

We announce to publish

FOUNDERS OF SCIENCES IN ANCIENT INDIA

By Dr Svami Satya Prakash Sarasvati

Contents

I Atharvan—The First Discoverer of Fire
II Fire leads to Mechanical Devices
III Dīrghatamas—The Discoverer of the Vedic Era
IV Gārgya—The First Enumerator of Consteliations
V Bharadvāja Presides over the First Medicinal Plants Symposium
VI Ātreya Punarvasu and His Academy of Medicine
VII Suśruta—The Father of Surgery
VIII Kaṇāda—The First Expounder of Realism, Law of Causation and Atomic Theory
IX Medhātithi—First to Extend Numerals to Billions
X Āryabhata lays Foundations of Algebra
XI Lagadha—The First to Rationalize Astronomy
XII Lātadeva & Sriṣeṇa Introduce Greek Astronomy to India
XIII Baudhāyana—The First Great Geometer

The volume will be ready by October 1985, will be printed on sunlit offset paper by Offset process.

Full cloth bound, Pages 700, Price Rs. 500/-

Pre-publication price Rs. 300/-

BOOK YOUR COPY TODAY

Send Your Order with draft to

GOVINDRAM HASANAND

4408, Nai Sarak, Delhi-110006

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

॥ ओ३म् ॥

वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष ३५, अंक १] वार्षिक मूल्य : दस रुपये [अगस्त १९८५

सम्पा० : विजयकुमार आ० सम्पादक : स्वा० जगदीश्वरानन्द सरस्वती

ईश्वर का वैदिक स्वरूप

ईश्वर एक और केवल एक है

केनोपनिषद् में शिष्य और आचार्य के प्रश्नोत्तर के रूप में ईश्वरविषयक विवेचन किया गया है। वहाँ लिखा है, चक्षु उसे देख नहीं सकती, वाणी उसका वर्णन नहीं कर सकती, मन उसका अनुभव नहीं कर सकता। उसका शिष्यों को उपदेश कैसे दिया जाए यह भी हम नहीं जानते, न समझ पाते हैं। फिर भी जिन प्राचीन पुरुषों ने उसके विषय में शिक्षा दी है, उनसे सुना है कि ब्रह्म विदित से भी अन्य है, अविदित से भी अन्य है। 'विदित' वह है जिसे हम जानते हैं, उसे हम नहीं जानते अतः वह विदित से अन्य है। 'अविदित' वह है जिसे हम नहीं जानते—उसे हम बिल्कुल नहीं जानते ऐसा भी नहीं है, इस विशाल संसार से उसका आभास तो नास्तिक-से-नास्तिक को भी हो जाता है, अतः वह अविदित से भी अन्य है। आगे आचार्य कहते हैं जो वचन के द्वारा प्रकाश नहीं पाता, जिससे वाणी प्रकट होती है, उसी को तू 'ब्रह्म' जान। जो मन से मनन नहीं करता परन्तु जिसके द्वारा मन मनन करता है उसी को तू ब्रह्म जान।

जो चक्षु से नहीं देखता जिसके द्वारा चक्षु देखती हैं, उसी को तू ब्रह्म जान।

जो श्रोत्र से नहीं सुनता जिसके द्वारा श्रोत्र सुनते हैं, उसी को तू ब्रह्म जान।

जो प्राण वायु से साँस नहीं लेता, जिससे प्राण प्राणित हो रहा है उसी को तू ब्रह्म जान।

आइए, वेद में ईश्वर का जो स्वरूप प्रदर्शित है उसको जानने का प्रयत्न करें। वास्तव में ईश्वर के स्वरूप को समझना बहुत कठिन है। वेद ने उस प्रभु के स्वरूप का वर्णन करते हुए बतलाया है कि वह प्रभु एक है। वह सब जगत् का स्वामी है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

य एकश्चर्षणीनां वसूनामिरज्यति ।
इन्द्रः पञ्च क्षितीनाम् ।। —ऋ० १।७।९

जो एक ही प्रभु पृथिवी पर रहनेवाले पांच प्रकार के मनुष्यों का तथा सब धनों का स्वामी है, वही उपास्य है ।

यह ईश्वर है तो एक ही परन्तु उसके गुण अनेक हैं, अतः उसके नाम भी अनेक हैं । प्रश्न हो सकता है, भगवान् के कितने नाम हैं ? यदि अनेक नाम हैं तो क्या यह सम्भव है कि एक व्यक्ति के अनेक नाम हो सकते हैं ? हाँ, यह सम्भव ही नहीं, ऐसा होता भी है । चार प्रकार के नाम व्यक्तियों एवं भगवान् दोनों के हो सकते हैं । जैसे—पहला अपना नाम, जैसे किसी का नाम विनय है, किसी का विनोद है, किसी का आरती, किसी का वैभव, किसी का वसु और किसी का शान्तनु । इसे निज नाम कहते हैं ।

दूसरा सम्बन्धद्योतक नाम भी हुआ करता है, जैसे पौत्र के सम्बन्ध से किसी व्यक्ति का नाम बाबा या दादी हो जाता है, पिता के सम्बन्ध से किसी का नाम पुत्र और पुत्री हो जाता है ।

तीसरा कर्मद्योतक नाम होता है—जैसे पाठशाला में पढ़ाने से अध्यापक, मशीनों का काम करवाने से इञ्जीनियर, चिकित्सा करने से डॉक्टर आदि ।

चौथा गुणवाचक नाम, जैसे चित्र बनाने से चित्रकार, गाना गाने से संगीतज्ञ, लेख लिखने से लेखक, कविता करने से कवि, श्रमशीला होने से तपस्विनी और शीलवती होने से सुशीला नाम पड़ जाता है ।

भगवान् के भी चारों प्रकार के नाम होते हैं । भगवान् का अपना नाम 'ओ३म्' है । **'ओं प्रतिष्ठ'** (यजु० २।१३) । ओं में समाहित हो ।**'ओं क्रतो स्मर'** (य० ४०।१५) । आत्मन् ! ओं का स्मरण कर । यह तो भगवान् का निजनाम हुआ ।

भगवान् के सम्बन्धपरक नाम भी हैं, जैसे माता, पिता, बन्धु, सखा, जनक, जनिता, पति और मित्र आदि नाम हैं । सबको जन्म देने से वह पिता, मान और प्रेम करनेवाला होने से माता, सबका सहायक होने से बन्धु और सबको स्नेह करने से मित्र कहलाता है ।

कर्मद्योतक नाम के रूप में हम भगवान् को विश्वकर्मा कहते हैं । सूर्य आदि प्रकाशशील लोकों को अपने अन्दर धारण करने से उसे हिरण्यगर्भ कहते हैं । समस्त चराचर जगत् को गति देने से वायु, न्यायकारी होने से अर्यमा, बड़ा पराक्रमी होने से उरुक्रम, प्रकाशकर्ता होने से सूर्य, आगे ले जानेवाला होने से अग्नि आदि नामों से हम उसे पुकारते हैं । यजुर्वेद ३२।१ में कहा गया है—

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः ।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः ।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वही पूर्णपुरुष अग्निस्वरूप, वही अखण्डनीय, वही गति देनेवाला, निश्चय करके वही सुख देनेवाला, वही पवित्र, वही सबसे बड़ा, वही सर्वव्यापक और वही सब जगत् का पालनेवाला है अर्थात् इन कर्मों के कारण अग्नि आदि प्रभु के नाम हैं।

परमेश्वर के गुणवाचक नामों में हम उसे 'खम्' सर्वव्यापक होने से कहते हैं। अविनाशी होने से वह अक्षर, सबका स्वामी होने से ईश्वर, स्वामियों का स्वामी होने से परमेश्वर, समस्त विश्व की आत्मा होने से विश्वात्मा, सब आत्माओं का आत्मा होने से परमात्मा, सबसे बड़ा होने से ब्रह्म और देवों का देव होने से वह महादेव कहलाता है।

ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के १६४वें सूक्त के ४६वें मन्त्र में इसीलिए कहा है—**'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति'** एक ही सत्यस्वरूप को ज्ञानीजन बहुत प्रकार से, अनेक नामों से पुकारते हैं।

सचमुच वह प्रभु अकेले ही विश्व का संचालन कर रहा है। आनन्द स्वामीजी महाराज उसके विषय में लिखते हैं "अहा! इस कथा के जिस नेता ने इस सोई प्रकृति को जन्म दिया, एकरूपा को अनेकरूपा बना दिया उसी प्रकृति को विकृत करके अनेक सूर्य, अनेक नक्षत्र, अनेक पृथिवियाँ, अनेक समुद्र और अनेक मण्डल तथा लोक बना दिये उसकी कथा कितनी मनोरञ्जक है!" सचमुच यदि हम रात में आकाश में अपनी नजर दौड़ाएँ तो इसमें जो आकाशगंगा दिखाई देती है, इसी में डेढ़ अरब सितारे चमक रहे हैं, इस समय तक दो अरब सौरमण्डल देखे जा चुके हैं और एक सौरमण्डल में वैसे ही सूर्य, चन्द्र, पृथिवी तथा तारामण्डल हैं, जैसे हमारे सौरमण्डल में। आकाशगंगा का व्यास जानने के लिए १७६३ के आगे १६ बिन्दु लगाने होंगे, जिनकी गणना नहीं हो सकती। प्रति सैकिण्ड प्रकाश की गति एक लाख छियासी हजार मील है और कुछ नक्षत्र तो इतने दूर हैं कि उनका प्रकाश पिछले दो अरब वर्ष से अभी तक भी पृथिवी तक नहीं पहुँच पाया है। कितनी बड़ी है यह सृष्टि! ये सब सौरमण्डल एक बहुत बड़े सौरमण्डल के इर्द-गिर्द घूम रहे हैं और वह महासूर्य परमेश्वर के नन्हे-से संकेत में बँधा सभी सौर-मण्डलों को व्यवस्था में रख रहा है। वेद कहता है—

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्।
सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः॥

—ऋ० १०।८१।३

जिस प्रभु के नेत्र सर्वत्र हैं, जिसके मुख सर्वत्र हैं, जिसके बाहु सर्वत्र कार्य कर रहे हैं वह पुण्य-पापरूप बाहु के द्वारा उत्पन्न प्रापणीय फलों से जीवों को गति देता है। वही दिव्य गुणयुक्त प्रभु द्युलोक और पृथिवीलोक को उत्पन्न करता है अर्थात् एक ही देव इस सम्पूर्ण चराचर जगत् का उत्पन्नकर्ता, नियन्ता और सञ्चालक है। वह सबको कर्मानुसार फल देता है और उसकी शक्तियाँ सर्वत्र समान हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

य एक इद्विदयते वसु मर्ताय दाशुषे।
ईशानो अप्रतिष्कुत इन्द्रो अङ्ग॥

—ऋ० १।८४।७

(दाशुषे मर्ताय) दाता मनुष्य के लिए (यः एकः इत्) जो अकेला ही (वसु विदयते) धन देता है वह (अप्रतिष्कुतः) अद्वितीय शक्तिशाली (ईशानः) ईश्वर (इन्द्रः) परमैश्वर्यवान् प्रभु ही (अंग) निश्चय से है।

स रायस्खामुप सृजा गृणानः पुरुश्चन्द्रस्य त्वमिन्द्र वस्वः।
पतिर्बभूथासमो जनानामेको विश्वस्य भुवनस्य राजा॥

—ऋ० ६।३६।४

अर्थात् हे प्रभो ! वह तू प्रशंसित होता हुआ अत्यन्त आह्लादकारक, निवासकधन की धाराएँ हमारे ऊपर छोड़ दे। तू संसार का अनुपम पति है और सब भुवनों का एक ही स्वामी है।

सम्पूर्ण जगत् का आधार एक परमात्मा ही है। वही प्रशंसा और नमस्कार करने योग्य है। वेद के ज्ञान द्वारा उसे प्राप्त करके मोक्ष के आनन्द का भोग करना चाहिए।

दिव्यो गन्धर्वो भुवनस्य यस्पतिरेक एव नमस्यो विक्ष्वीड्यः।
तं त्वा यौमि ब्रह्मणा दिव्य देव नमस्ते अस्तु दिवि ते सधस्थम्॥

—अ० २।२।१

जो दिव्यगन्धर्व अर्थात् भुवनों का धारण करनेवाला है, जो भुवनों का एक ही स्वामी है वही प्रजाओं में नमस्कार करने योग्य है, प्रशंसा करने योग्य है। हे अद्भुत ईश्वर ! उस तुझको मैं वेद द्वारा प्राप्त होता हूँ। तुझे नमस्कार हो। तेरा वास तेरे अपने स्वरूप में है।

वास्तव में वह ईश्वर एक ही है। अज्ञान में पड़कर मनुष्य दूसरे देवी-देवताओं की कल्पना करके अन्यों को देवता या ईश्वर मानकर पूजा करने लगता है।

कबीर ने कहा है—

दुई जगदीश कहाँ से आया ?

भुवनस्य यस्पतिरेक एव—संसार का एक ही स्वामी है।

अथर्ववेद के एक अन्य मन्त्र में कहा है—

तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव।

—अ० १३।४ (२)।२०

(इदं सहः) यह सामर्थ्य (तं निगतं) उस परमात्मा को प्राप्त है। (सः एषः एकः) वह एक ही है (एकवृत्) अकेला वर्तमान (एक एव) एक ही है।

सब सामर्थ्य परमात्मा में है और वह एक एवं अद्वितीय है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कीर्तिश्च यशश्चाम्भश्च नभश्च ब्राह्मणवर्चसं चान्नं चान्नाद्यं च।
य एतं देवमेकवृतं वेद ॥

—अ० १३।४ (२) । १४,१५

अर्थात् कीर्ति, यश, पराक्रम और स्थान, ज्ञान का तेज, अन्न तथा खान-पान के पदार्थ उसको प्राप्त होते हैं जो इस देव प्रभु को एक और व्यापक जानता है।

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते।
न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते।
नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते।
य एतं देवमेकवृतं वेद ॥

—अ० १३।४ (२) १६-१८

वह परमात्मा न ही द्वितीय, न ही तृतीय, न ही चतुर्थ, न ही पञ्चम, न ही षष्ठ, न ही सप्तम, न ही अष्टम, न ही नवम, न ही दशम कहा जाता है। जो इस देव को एक मानता है, उसको वह प्राप्त होता है अर्थात् वह अकेला एक ही वर्तमान है।

आजकल देश में —परदेश में अनेक देवों की उपासना और भक्ति की जा रही है। परन्तु वास्तव में अग्नि, वायु, इन्द्र, आदित्य, चन्द्रमा आदि सब एक ही परमात्मा के नाम हैं। हम अज्ञानवश उन्हें अलग-अलग देव मानकर उनकी अलग-अलग उपासना करते हैं। उन देवों के अतिरिक्त आज मनुष्यों में भी देव या परमेश्वर बनते जाते हैं। अज्ञान के कारण राम और कृष्ण को परमेश्वर का अवतार मानकर उपासना की ही जाती थी, आजकल तो देवताओं या ईश्वरों की बाढ़-सी आ गई है। कहीं साईं बाबा हैं तो कहीं जय गुरुदेव हैं। कहीं बालयोगेश्वर हैं तो कहीं चौपटानन्द हैं। सब ईश्वर बनकर अपनी उपासना करवाना चाहते हैं। परन्तु विचारणीय यह है कि क्या वैदिक स्वरूप के अनुसार ये लोग ईश्वर कहला सकते हैं ? इन ईश्वरों के अस्वस्थ होने, डरने, थकने, एक स्थान पर रहने के कारण ईश्वर के सदृश मानना सम्भव नहीं लगता। वेद जोरदार शब्दों में कहता है, वह दो नहीं, तीन नहीं ... दस नहीं। वह एक है और निश्चय से एक है।

स सर्वस्मै वि पश्यति यच्च प्राणति यच्च न।
य एतं देवमेकवृतं वेद ॥

—अ० १३।४ (२) १९

वह सबके लिए विशेष रीति से देखता है, जो प्राण लेता है और जो नहीं। जो इसको अकेला एक वर्तमान जानता है उसको यह प्राप्त होता है।

तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव।
य एतं देवमेकवृतं वेद ॥

—अ० १३।४ (२) २०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सब सामर्थ्य उसको ही प्राप्त है। वह (प्रभु) एक अकेला ही है। जो इसको एक ही मानता है उसको सामर्थ्य प्राप्त होता है।

जो व्यक्ति अनेक देवों की उपासना न करके एक प्रभु की उपासना करता है, उसको अनेक वस्तुएँ मिलती हैं। कौन-कौन-सी वस्तुएँ मिलती हैं ? वेद कहता है—

> **ब्रह्म च तपश्च कीर्तिश्च यशश्चाम्भश्च नभश्च,**
> **ब्राह्मणवर्चसं चान्नं चान्नाद्यं च।**
> **भूतं च भव्यं च श्रद्धा च रुचिश्च स्वर्गश्च स्वधा च,**
> **य एतं देवमेकवृतं वेद॥**

—अ० १३।४ (३) २२-२४

ज्ञान और तप, कीर्ति, यश, सामर्थ्य, स्थान, ज्ञान का तेज, अन्न और खाद्य, भूत भविष्य के सुख, श्रद्धा, रुचि, स्वर्ग और अपनी धारणशक्ति उसको प्राप्त होती है, जो इस प्रभु को अकेला और सर्वव्यापक जानता है।

> **सर्वे अस्मिन् देवा एकवृतो भवन्ति।**
> **य एतं देवमेकवृतं वेद॥**

—अ० १३।४। (२) २१

इसमें सब देव एकरूप हो जाते हैं। जो इस प्रकार इस अकेले एक देव (ईश्वर) को जानता है, वह ज्ञानी होता है।

अग्नि आदि नाम प्रभु के ही हैं, उसी प्रभु के जो एक है—केवल एक है। ऋग्वेद में कहा गया है—

> **त्वमग्ने रुद्रो असुरो महो दिवस्त्वं शर्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे।**
> **त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्ग्यस्त्वं पूषा विधतः पासि नु त्मना॥**

—ऋ० २।१।६

हे ज्ञानस्वरूप ! तू द्युलोक का बड़ा प्राणदाता रुद्र है, तू मरुतों का बल है और अन्न का स्वामी भी तू ही है। तू सुखमय प्रेरक शक्तियों के साथ प्राप्त होता है, तू पूषा अपनी शक्ति से ही उपासकों का पालन करता है।

उस एक ही देव को द्रविणोदा, अग्नि आदि नामों से वर्णित करते हुए ऋग्वेद कहता है—

हे ईश्वर ! तू ही पर्याप्त पुरुषार्थ करनेवाले के लिए धन देनेवाला है, तू ही रत्नों का धारणकर्ता सवितादेव है। हे मनुष्यों के पालक ! तू ही भग होकर धन का स्वामी होता है, जो घर में तेरी उपासना करता है उसका तू रक्षक होता है।

> **इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्।**
> **एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः॥**

ऋ० १।१६४।४६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक ही सद्वस्तु को इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, दिव्य, सुपर्ण, यम, मातरिश्वा आदि नाम देते हैं अर्थात् इन नामों से उस एक ही वस्तु का वर्णन होता है।

य एक इत्तमु ष्टुहि कृष्टीनां विचर्षणिः।
पतिर्जज्ञे वृषक्रतुः॥

—ऋ० ६।४५।१६

जो अकेला ही बलवान् कर्म करनेवाला है और मनुष्यों का विशेष द्रष्टा पति है, उसी की स्तुति कर।

य एक इद्धव्यश्चर्षणीनामिन्द्रं तं गीर्भिरभ्यर्च आभिः।
यः पत्यते वृषभो वृष्ण्यावान्त्सत्यः सत्वा पुरुमायः सहस्वान्॥

ऋ० ६।२२।१

जो बलवान्, शक्तिशाली, तीनों कालों में एक जैसा सत्य, सत्त्ववान्, महाज्ञानी और विजयी शक्ति से युक्त, सबको आश्रय देता है, वह अकेला ही मनुष्यों का पूजनीय है। उसकी इन स्तोत्रों से पूजा कर।

इसी प्रभु को वेद पिता, जनक और भाई कहता है।

स नः पिता जनिता स उत बन्धुर्धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यो देवानां नामध एक एव तं संप्रश्नं भुवना यन्ति सर्वा॥

—अ० २।१।३

वही ईश्वर हमारा पालक और उत्पादक तथा बन्धु है, वही सम्पूर्ण भुवनों को और स्थानों को जानता है तथा जो ईश्वर अकेला ही देवों के नाम धारण करनेवाला है उसी पृच्छा करने योग्य ईश्वर के प्रति सब अन्य भुवन मिलकर जाते हैं।

वह प्रभु सबका पिता, माता, जनक और भाई है। सम्पूर्ण देवों के सभी नाम उसके लिए ही प्रयुक्त किये जाते हैं।

एक ही देव संसार का उत्पादक, पालक, संचालक और नाश करनेवाला है। वह सदा हमारे साथ रहता है। उस महान् स्रष्टा से अपना नाता जोड़कर ही हम उसके निर्माण-कार्य में हाथ बँटा सकते हैं। पृथिवी का कण-कण उसी निर्माता की अपूर्व योजना की गवाही देता है। हमारा जीवन भी तभी सच्चा मानव-जीवन होगा जब हम उस स्रष्टा द्वारा निर्मित इस पृथिवी के सुन्दर रूप को और भी सुन्दर बनाएँगे, मनुष्यता को ईश्वरत्व के पास ले जाएँगे। मनुष्य के भीतर एक ऐसा रूप बसा हुआ है जो बिल्कुल निष्कलंक और सुन्दर है, जो न तो कभी पैदा हुआ है और न कभी मरेगा, न ही उसे कलंकित किया जा सकता है और न ही कोई उसका रूप बदल सकता है। यही ईश्वरीय अंश या भावना है जो मानव-जीवन के निर्माण का सच्चा रूप है। आइए, हम उसका ध्यान करें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप है

इस संसार में ईश्वर, जीव और प्रकृति ये तीन वस्तुएँ अनादि और अनन्त हैं। इनमें से जड़ प्रकृति केवल 'सत्' है अर्थात् उसकी सत्ता तो है पर वह चेतन नहीं है। चेतन न होने से उसे न तो सुख मिल सकता है और न दुःख। इसलिए प्रकृति के आनन्द या सुख अनुभव करने का प्रश्न ही नहीं। वह जड़ है। जड़वस्तु सुख-दुःख दोनों का अनुभव नहीं कर सकती। प्रकृति के बाद 'जीव' का नम्बर आता है। 'जीव' की सत्ता भी है और वह चेतन भी है। चेतन होने से उसे सुख या आनन्द भी होता है और दुःख भी होता है पर वह दुःख नहीं चाहता, उसे सुख की—आनन्द की ही कामना रहती है। अब उस आनन्द को वह कहाँ से प्राप्त करे? प्रकृति में आनन्द नहीं। वह तो जड़ है।

इन दो शक्तियों के अतिरिक्त तीसरी शक्ति है 'ईश्वर'। ईश्वर की सत्ता है अतः वह 'सत्' है। चेतन होने से उसे हम 'चित्' कहते हैं। और क्योंकि वह आनन्द से परिपूर्ण है इसलिए हम उसे 'आनन्द' भी कहते हैं। वह भगवान् सच्चिदानन्द-स्वरूप है।

अब स्थिति यह है कि प्रकृति को जड़ होने से न तो सुख का अनुभव होगा और न दुःख का, अतः उसे आनन्द की आवश्यकता ही नहीं। ईश्वर आनन्द का भण्डार है अतः उसे भी आनन्द खोजने बाहर नहीं जाना है। रहा जीव! जीव को सुख भी होता है, दुःख भी। परन्तु वह सुख चाहता है, आनन्द चाहता है और उसकी तलाश में भटकता है। वह खोजता रहता है कि किस वस्तु में रस है, किस वस्तु में आनन्द है। संसार की जिन वस्तुओं में रस दीखता है, उन्हीं से चिपट जाता है। परन्तु संसार की वस्तुएँ उसे कुछ देर तक ही रस देती हैं। उनका रस समाप्त होने के बाद फिर उसे पहले की तरह रस की खोज करनी पड़ती है। उदाहरण के लिए हम एक चींटे का उदाहरण ले सकते हैं। चींटा कितना चञ्चल होता है, लगातार चला करता है—इधर से उधर। एक व्यक्ति उसको इस प्रकार भटकते देख गुड़ की एक छोटी डली उसके सामने फेंक देता है और वह उससे चिपट जाता है। अब वह उसमें बिल्कुल एकाग्र हो जाता है। परन्तु जब वह उस डली की पूरी मिठास को चूस लेता है तब उसे छोड़कर फिर आगे के लिए निकल पड़ता है—उसी आनन्द और सुख की तलाश शुरू कर देता है। मन की भी ठीक यही दशा है। वह भी चञ्चल है। मन ढूंढता-फिरता है कि किस वस्तु में रस है, आनन्द है। उसे संसार में, संसार की जिस वस्तु में आनन्द दीखता है, उसी से चिपट जाता है। ये सांसारिक पदार्थ उसे कुछ देर ही आनन्द देते हैं। रस लेने के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बाद चींटे की तरह उसमें फिर चञ्चलता आ जाती है। रस की तलाश फिर वैसी-की-वैसी हो जाती है। वह लखपति, करोड़पति होना चाहता है। करोड़पति की अभिलाषाएँ और ऊँची हो जाती हैं। डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने बड़े सुन्दर शब्दों में इस तलाश का वर्णन करते हुए लिखा है—"प्यास है तो उसे दूर करने के लिए पानी मौजूद है। आँख है तो देखने के लिए सूर्य मौजूद है। चञ्चलता है, तलाश है तो अखण्ड आनन्द का स्रोत जिसकी तलाश है वह भी मौजूद है।" आगे वे कहते हैं, "बूंद से पूछो, तू किसकी तलाश में है? वह कहेगी—समुद्र की, जो बूंदों का भण्डार है। दीये की लौ से पूछो—तू किसको ढूंढ रही है? वह कहेगी, सूर्य को जो ज्योतियों का स्रोत है। मन से पूछो—तू किस यात्रा में निकला है? वह कहेगा, उस लक्ष्य को पाने के लिए जहाँ पहुँचकर यात्रा की थकान मिट जाती है, जहाँ पहुँचकर आगे चलने की चाह नहीं रहती।" उपनिषदों के ऋषियों के सामने यही प्रश्न उठ खड़ा हुआ था। ऋषि ने पूछा, 'ऐ बटोही! तू किसकी तलाश में है? तुझे कहाँ जाना है?' ऋषि जिज्ञासु से कहता है—"बिना सुख के कोई कुछ नहीं करता, सुख मिलने से ही मनुष्य कर्म में प्रवृत्त होता है, इसलिए तुझे 'सुख' के जानने की इच्छा करनी चाहिए।" नारद ने कहा, "तो भगवन्! मुझे उस सुख और आनन्द का उपदेश दीजिए।"

ऋषि ने कहा—

यो वै भूमा तत्सुखम्। नाल्पे सुखमस्ति। भूमैव सुखम्।
भूमा त्वेव त्वया विजिज्ञासितव्य इति॥ —छान्दोग्य ७।२३।१

अर्थात् **'यो वै भूमा तत्सुखम्'**—जो 'भूमा' है, असीम है, निरतिशय है, महान् है, फैला हुआ है, व्यापक है, वही सुख है; **'न अल्पे सुखमस्ति'** जो अल्प है, ससीम है, परिमित है, क्षुद्र है, अल्प है, उसमें सुख नहीं है। 'भूमा' ही सुख है, उसे जानने की इच्छा करनी चाहिए।

ऋषि ने नारदजी को 'भूमा' रूप की व्याख्या करते हुए बताया, "जिस परम-शुद्ध अवस्था में आत्मा अन्य वस्तु को न देखता है, न सुनता है, न जानता है वही 'भूमा' है। जहाँ आत्मा अन्य वस्तु को देखता है, सुनता है, जानता है, वही अल्प है। जो 'भूमा' है वह 'अमृत' है, जो अल्प है वह 'मर्त्य' है—मरणधर्मा है। यह 'भूमा' अपनी ही महिमा में प्रतिष्ठित है। या यह कहें कि वह महिमा में भी प्रतिष्ठित नहीं है।"

उपनिषद् ने इस प्रभु के लिए कहा है "रसो वै सः" रसों का रस वही है।

अथर्ववेद में कहा है—

अकामो धीरो अमृतः स्वयंभू रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः।
तमेव विद्वान् न बिभाय मृत्योरात्मानं धीरमजरं युवानम्॥

—अ० १०।८।४४

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वह प्रभु कामनारहित, धीर, धृतिमान्, सर्वज्ञ, अविनाशी, सदामुक्त, स्वयंभू, आनन्द से तृप्त, कहीं से भी न्यून नहीं, उसी धीर, अजर, सदा नूतन, सर्वव्यापक को जाननेवाला मौत से डरता नहीं है।

इस मन्त्र में प्रभु को **'रसेन तृप्तः'** रस से तृप्त है, रस से भरपूर है कहा गया है। क्यों? क्योंकि **'न कुतश्चनोनः'** वह किसी प्रकार से न्यून नहीं है। कामना के कारण रस में विघात पड़ता है। कामना कमी की, अल्पता की द्योतक है। भगवान् में किसी प्रकार की ऊनता=न्यूनता=कमी नहीं है। उसको जानने और उसके उपदिष्ट साधनों पर आचरण करने से दुःख, मृत्यु और अन्धकार दूर हो जाते हैं, आनन्द, अमृतत्त्व और प्रकाश की प्राप्ति होती है।

अथर्ववेद में उस प्रभु को आनन्द का स्रोत कहा गया है—

शतं सहस्रमयुतं न्यर्बुदमसंख्येयं स्वस्मिन् निविष्टम्।
तदस्य घ्नन्त्यभिपश्यत एव तस्माद् देवो रोचत एष एतत्॥

—अथर्व० १०।८।२४

सैकड़ों, सहस्रों, दशसहस्र, दस करोड़ और इससे भी अधिक आनन्द इस प्रभु में सन्निविष्ट है। जो व्यक्ति उस प्रभु का साक्षात्कार करते हैं वे ही उस आनन्द को प्राप्त करते हैं। अपने उसी आनन्दमय रूप के कारण परमात्मा इस संसार को आनन्द की धाराओं से पूर्ण कर रहा है। एक ओर ऊपर फैला हुआ नीलगगन कभी काले-काले बादलों से आवृत, कभी जगमगाते नक्षत्रों से शोभित आठों पहर अपनी आभा बिखेरता दिखाई देता है। दूसरी ओर जमीन पर दूर-दूर तक फैले हुए हरे-भरे खेतों में प्रसन्नता और आनन्द की धारा बहती हुई दिखाई देती है। कहीं ऊँचे खड़े पहाड़ों की गगनचुम्बी चोटियाँ प्रसन्नता से उचकती दिखाई देती हैं तो कहीं उनपर पड़ी हुई चमकीली रजत की पिघलती धारा-सी नदियाँ आनन्द में उछलती-कूदती दिखाई देती हैं। पवन के झकोरों में, पक्षियों के कलरव में, प्रपातों की झंकार में, बादलों के गर्जन में, झरनों की झर-झर में, हरिणों की छलाँग में, मयूरों के नर्तन में क्या आनन्द की भावना नहीं है? हरा परिधान धारण किये तरुगण अपने रंगबिरंगे फूलों से उसी के हास्य को प्रकट कर रहे हैं। आहा! आनन्द, खुशी और हास्य की मृदु लहरों से क्या यह संसार उमड़ नहीं रहा है? इसीलिए बृहदारण्यक उपनिषद् में प्रभु के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा गया है—

विज्ञानमानन्दं ब्रह्म। —बृह० ३।६।२८

ब्रह्म विज्ञानस्वरूप है। ब्रह्म आनन्दस्वरूप है। उसके विषय में तैत्तिरीयोपनिषद् में कहा है—

आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन।

—तै० ब्रह्मानन्दवल्ली (९)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जो इस आनन्दरूप ब्रह्म को जानता है, उसे सन्ताप नहीं होता।

उपनिषद् ने भगवान् का सुन्दर चित्रण करते हुए लिखा है—

तस्य प्रियमेव शिरः, मोदो दक्षिणः पक्षः।
प्रमोदः उत्तरः पक्षः। आनन्द आत्मा।।

—तै० २-५

प्रेम उस प्रभु का सिर है। मोद उसका दायाँ पक्ष है। प्रमोद बायाँ पक्ष है। आनन्द उसका आत्मा है। जो व्यक्ति परमात्मा के इस स्वरूप को समझ लेता है **'तरति शोकमात्मवित्'** वह आत्मा को जाननेवाला सम्पूर्ण दुःखों को पार कर लेता है।

वेद में परमेश्वर को आनन्दमय मानते हुए कहा गया है—

कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा।
कया शचिष्ठया वृता।।

—ऋ० ४।३१।१

सदा से महान् और आश्चर्यकारक ईश्वर आनन्दमय रक्षण के द्वारा और आनन्दमय महाशक्ति के द्वारा और वार-वार सृष्टि-रचनादि कर्म के द्वारा हम सबका मित्र होता है।

कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः।
दृढा चिदा रुजे वसु।।

—य० ३६।५

आनन्दवालों में अत्यन्त पूज्य, सज्जन, हितैषी, त्रिकालाबाधित, सत्यस्वरूप और आनन्दस्वरूप परमेश्वर तुझको आनन्दयुक्त करता है। वह ज्ञानी परमेश्वर दुःख पानेवाले जीव को दृढ़ और शीघ्र नष्ट न होनेवाला मोक्षरूप धन देता है।

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

—ऋ० १०।१२१।१

जिसके गर्भ में अनेक तेजस्वी पदार्थ हैं वह परमात्मा सृष्टि के पूर्व था। वह सब बने हुए संसार का एक ही स्वामी प्रसिद्ध है। उसने पृथिवी और इस द्युलोक को भी धारण किया है। उस आनन्दस्वरूप एक देव की ही यज्ञ के द्वारा हम उपासना करें।

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

—ऋ० १०।१२१।२

जो आत्मिक तेज और बल देता है, सम्पूर्ण देव जिसके शासन में रहते हैं। जिसके आश्रय में रहना अमरपन है और जिससे दूर रहना ही मृत्यु है, उस आनन्दस्वरूप प्रभु की सेवा में हम आत्मार्पण करते हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।

—ऋ० १०।१२१।३

प्राण धारण करनेवाले, निमेषोन्मेष करनेवाले संसार का अपनी महिमा के कारण परमात्मा एक ही राजा है। इस जगत् के दो पाये और चौपाये प्राणियों पर जो अकेला ही शासन करता है उस आनन्दस्वरूप परमात्मा की यज्ञ द्वारा हम सबको सना करउपानी चाहिए।

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः ।
येस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।

—ऋ० १०।१२१।४

ये बर्फ से ढके पर्वत और पृथिवी के साथ समुद्र जिसकी महिमा की प्रशंसा कर रहे हैं और जिसके बाहू दिशा-उपदिशाओं में रक्षण का कार्य कर रहे हैं, उस आनन्दस्वरूप परमात्मा की ही उपासना यज्ञ द्वारा हम सबको करनी चाहिए।

इस सूक्त में परमात्मा के लिए 'क' शब्द का प्रयोग हुआ है। 'क' शब्द के अर्थों में एक अर्थ आनन्दस्वरूप भी है और इसके साथ 'देवाय' शब्द भी आया है जिसका अर्थ है चाहने योग्य। यह परमात्मा अपने आनन्दमय स्वरूप के कारण सदा चाहने योग्य है। उसकी उपासना हमें आत्मार्पण के द्वारा करनी चाहिए। इस सूक्त में अन्य भी मन्त्र आये हैं जिनमें '**कस्मै देवाय हविषा विधेम**'—उस चाहने योग्य आनन्दस्वरूप परमेश्वर की आत्मार्पण द्वारा हमें पूजा करनी चाहिए, यह बात बताई गई है।

अथर्ववेद में भी प्रभु को आनन्दस्वरूप बतलाया है—

यस्य द्यौरुर्वी पृथिवी च मही यस्याद उर्वन्तरिक्षम् ।
यस्यासौ सूरो विततो महित्वा कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।

—अ० ४।२।४

जिसके वश में बड़ा द्युलोक है और बड़ी पृथिवी जिसके अधीन है और इस विस्तृत अन्तरिक्ष को जिसने वश में किया हुआ है और जिससे फैला हुआ और रचा हुआ यह सूर्य महत्त्व के साथ चमकता है उस आनन्दस्वरूप देवता की हम आत्मार्पण द्वारा पूजा करें।

त्वं ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन्त्सता ।
सखा सख्या समिध्यसे ।।

—ऋ० ८।४३।१४

हे अग्ने ! प्रकाशयुक्त जीव ! सचमुच तू प्रकाशस्वरूप, मेधावी=चित्स्वरूप, सत्-स्वरूप, आनन्दमय तथा आनन्दयुक्त स्नेही परमेश्वर से युक्त होकर, अग्रणी, मेधावी=ज्ञानी, सद्गुणविशिष्ट तथा परमात्मा के समान गुणोंवाला अर्थात् आनन्दमय होकर शोभित होता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पूज्य स्वामी वेदानन्दजी महाराज ने दूसरा भाव लिखा है—"जिस प्रकार अग्नि से अग्नि प्रदीप्त की जाती है, जिस प्रकार विद्वान् की सत्संगति से दूसरा मनुष्य भी विद्वान् हो जाता है, जैसा सज्जनों के मेल से दूसरे व्यक्ति भी सज्जन वन जाते हैं उसी प्रकार परमात्मा की सत्संगति से जीवात्मा में ज्ञान, आनन्द आदि अनेक उत्तम गुणों का संचार होता है, अतः जीवन में आनन्द के लिए आनन्दस्वरूप का ध्यान आवश्यक है।

मैं आचार्य अभयदेवजी के शब्दों में प्रभु से यही प्रार्थना करूँगा कि "इस सर्वव्यापी हास्य के स्रोत, हे आनन्द के खजाने! आनन्दमय प्रभो! तेरे अनगिनत दानों में से मैंने आज इस एक हँसी और आनन्द के दान को पहचाना है और अपनाया है। हे दाता! इससे मुझे कभी विमुक्त मत करना। मुझे अयोग्य देख और सब दान भले ही मुझसे छीन लेना परन्तु हे करुणानिधान! इस हँसी के, आनन्द के दान को तो अपने स्मृति-चिह्न के तौर पर ही सही मेरे पास रहने देना। यही नाथ! एक प्रार्थना है। इस लोक में, परलोक में, जवानी में या बुढ़ापे में, वर्षा में या ग्रीष्म में, दिन में या रात में सदैव ही यह तेरा हास्य या आनन्द का उपहार-पुष्प इस तुच्छ पौधे पर विकसित रहे, कभी भी म्लान न हो। हे प्रभो! कभी भी म्लान न हो।"

ईश्वर निराकार है

निराकार शब्द का अर्थ है—आकार, रूपरंग आदि से रहित होना। ईश्वर को माननेवाले को आस्तिक कहते हैं और न माननेवाले को नास्तिक। आस्तिकों के भी दो भेद हैं। इनमें से एक ईश्वर को साकार मानते हैं और दूसरे निराकार। साकार उपासक प्रभु की मूर्ति वनाते हैं और उसकी प्रतिष्ठा करके उससे नाना प्रकार की वस्तुओं की याचना करते हैं। अब प्रश्न उपस्थित होता है कि ईश्वर को साकार मानने से क्या हानि है? इस विषय में हमें एक पुरानी कहानी याद आ रही है। किसी गुरु के दो शिष्य थे। गुरु ने दोनों को प्रभु की सर्वव्यापकता समझाते हुए कहा कि प्रभु को सर्वव्यापक मानने से हम पापों से बच सकते हैं। सर्वव्यापकता समझाने के बाद दोनों को एक-एक फूल दिया और एक-एक चाकू और कहा कि इसे ऐसे स्थान पर ले जाओ जहाँ कोई न देख रहा हो। एक ने किवाड़ वन्द किये और फूल काटकर गुरु की सेवा में पहुँच गया परन्तु दूसरा बिना काटे ही ले आया। इस दृष्टान्त का भाव यह है कि प्रभु को सर्वव्यापक समझनेवाला उसे सर्वत्र पाएगा और वह पापों से बच जाएगा। दूसरा जो प्रभु को एकदेशीय मानकर चलेगा वह पापों से बचने की आवश्यकता अनुभव ही न करेगा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और सर्वव्यापकता के हटते ही वह पाप करने से हिचकिचाएगा नहीं। साकार वस्तु एकदेशीय होती है। परमेश्वर को साकार समझते ही हम उसकी सर्वव्यापकता को समाप्त कर देते हैं। यदि वह साकार प्रभु गोरखपुर में रहेगा तो दिल्ली और कानपुर खाली रहेंगे और वहाँ अपराध करने पर भी उसे कोई देखनेवाला नहीं होगा। उस दशा में प्रभु पूर्ण न्यायकारी भी नहीं रह सकेगा। न्यायकारी तभी होगा जब वह सर्वत्र होगा और सर्वज्ञ तभी होगा जब सर्वव्यापक होगा। साकार सर्वव्यापक हो नहीं सकता, अतः प्रभु को निराकार मानना पड़ेगा।

वेद कहता है—

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद् यशः।
हिरण्यगर्भ इत्येष मा मा हिँसीदित्येषा यस्मान्न जात इत्येषः।।

—य० ३२।३

(यस्य) जिसका **(महत्)** महान् **(नाम)** प्रसिद्ध **(यशः)** यश है **(तस्य)** उस परमात्मा की कोई **(प्रतिमा)** प्रतिमा=मूर्ति **(न अस्ति)** नहीं है। **(हिरण्यगर्भ इति एषः)** हिरण्यगर्भ इत्यादि मन्त्रों द्वारा **(मा मा हिंसीत् इति एषा)** 'मा मा हिंसीत्' इस मन्त्र से और **(यस्मात् न जातः)** 'यस्मात् न जातः' इस मन्त्र से उसका वर्णन होता है।

एक दूसरे मन्त्र में इसे बहुत पुराना, सबसे पहला देव बतलाया गया है और कहा गया है कि वह महान् आकाश में स्थित है और न इसके हाथ हैं और न पाँव, और न सिर आदि अवयव हैं अर्थात् यह अशरीरी, निराकार है और सबके अन्दर गुप्त अथवा व्याप्त है। शरीररहित होने से यह निरवयव है और इसी कारण यह सबमें व्याप्त है। वह परमेश्वर अव्यक्त है। उसके प्राप्त करने का उल्लेख करते हुए यह कहा गया है कि बलवान्, आत्मिक शक्ति-सम्पन्न व्यक्ति ही इसे प्राप्त कर सकता है। **'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः'** यह आत्मा बलहीन को प्राप्त नहीं होता। दुर्बलों को आनन्दस्वरूप की प्राप्ति कहाँ ? उसके लिए तो दुःख, दरिद्रता और हीनता ही रहती है।

वेद में कहा है—

स जायत प्रथमः पस्त्यासु महो बुध्ने रजसो अस्य योनौ।
अपादशीर्षा गुहमानो अन्तायोयुवानो वृषभस्य नीळे।।

—ऋ० ४।१।११

(सः प्रथमः पस्त्यासु जायत) वह पहले प्रजाओं में हुआ है **(अस्य महः रजस बुध्ने योनौ)** वह इस महान् अन्तरिक्ष के मूल स्थान में होता है। यह **(अपादशीर्षा)** पाँव सिर आदि के अवयवों से रहित है **(अन्ता गुहमानः)** अन्दर गुप्त है। यह **(वृषभस्य नीळे)** वीर्ययुक्त पुरुष के स्थान में **(आ योयुवानः)** संघटना का कार्य करता है। एक अन्य मन्त्र में बतलाया गया है—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सर्वे निमेषा जज्ञिरे विद्युतः पुरुषादधि।
नैनमूर्ध्वं न तिर्यञ्चं न मध्ये परिजग्रभत् ॥

—य० ३२।२

विशेष तेजस्वी और (पुरुषात्=पुर्+उषात्) सृष्टि में पूर्ण व्यापक परमात्मा से (सर्वे) सब (निमेषाः) निमेष आदि काल के अवयव (जज्ञिरे) होते हैं। कोई भी (एनं) इस परमात्मा का (न ऊर्ध्वं) न ऊपर (न तिर्यञ्चं) न तिरछा (न मध्ये) न मध्य भाग में (परिजग्रभत्) पूर्णता से ग्रहण कर सकता है अर्थात् काल के सब अवयव और सब गति उसी तेजस्वी सर्वव्यापक परमात्मा से प्रकट हो रही है। उस परमात्मा का न ऊपर है, न नीचे है, न मध्य है अर्थात् वह निराकार है।

अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया।
गृभ्णन्ति जिह्वया ससम् ॥

—ऋ० ८।७२।३

जो बुद्धि से परे है, उस रुद्र प्रभु को ज्ञानी मुमुक्षु आत्मा के भीतर चाहते हैं—खोजते हैं। जैसे फल को जिह्वा से ग्रहण करते हैं।

यजुर्वेद के ४०वें अध्याय के, जो ईशोपनिषद् के नाम से विख्यात है, ८वें मन्त्र में कहा है—

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरँ शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥

—यजु० ४०।८

जो ब्रह्म शीघ्रकारी, तेजस्वी, सर्वशक्तिमान्, स्थूल शरीर से रहित है, घाव, छिद्र तथा नस-नाड़ी के बन्धन से रहित, अतः सूक्ष्मशरीर-रहित है, परम पवित्र है, वह कभी पाप से विद्ध नहीं होता। वह कवि है, क्रान्तदर्शी है, विद्वान् है, वह मनीषी दुष्ट और पापियों का तिरस्कार करनेवाला है, स्वयंसिद्ध, अपने-आप होनेवाला—अनादि है। वह अनादिकाल से पदार्थों को यथार्थरूप में, जो पदार्थ जैसे होने चाहिएँ थे, उस रूप में निर्मित करता है, व्यवस्थित करता है।

इस मन्त्र में परमेश्वर को अकायम्=शरीररहित कहा गया है। उसके पास हमारे जैसा शरीर नहीं है; वह क्रियावान् है परन्तु कायवान् नहीं है। वह शरीर और शरीर के उपकरणों के बिना ही विश्व का निर्माण, पालन-पोषण और संहार करता है। सगुण भगवान् के उपासक तुलसीदास ने भगवान् का स्वरूप बतलाते हुए कहा है—

बिनु पगु चलै, सुनै बिनु काना,
कर बिनु करम करै विधि नाना।
आननरहित सकल रस भोगी,
बिनु बाणी बकता बड़ जोगी।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तन बिनु परस नयन बिनु देखा,
ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेखा ।।

उसे 'अव्रणम्' भी कहा है। जब शरीर ही नहीं तो व्रण का सवाल ही कहाँ पैदा होता है ? प्रभु तो अशरीरी है, अतः उसके व्रण हो ही नहीं सकते। इस मन्त्र में 'अव्रणम्' के बाद 'अस्नाविरम्' शब्द से उसकी विशेषता कही गई है। 'अस्नाविरम्' का अर्थ है प्रभु नस-नाड़ी के बन्धन से रहित है। जब शरीर ही नहीं तो स्नायु आदि शरीर के आधार कहाँ से होंगे ?

श्वेताश्वतर उपनिषद् में उसके रूप का बड़ा सुन्दर वर्णन है—

सहस्रशीर्षाः पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशांगुलम् ।।

—श्वेता० ३।१४

वह पुरुष सहस्रों सिरोंवाला, सहस्रों आँखोंवाला, सहस्रों पाँवोंवाला है। वह हाथ से ब्रह्माण्ड को सब तरफ से घेरे हुए है फिर भी उसकी दस अँगुलियाँ दूर खड़ी हैं। घेरने से तो दसों अंगुलियाँ भर जानी चाहिएँ, परन्तु यह ब्रह्माण्ड उसके लिए इतना तुच्छ है कि इसे घेरकर भी उसके दोनों हाथों की दसों अंगुलियाँ मानो खाली रह जाती हैं।

अगले मन्त्र में कहा है—

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ।।

—श्वेता० ३।१६

सब ओर उसके हाथ-पैर हैं, सब ओर आंख, सिर, मुख हैं, सब ओर कान हैं। संसार में सबको घेरकर वह खड़ा है—फिर कहाँ कौन उससे बचकर किधर निकल जाएगा ?

जब यहाँ हाथ, पैर, आंख, कान आदि से युक्त उसे कहा गया है तो वह निराकार कैसे हुआ ? हाथ, पैर, आंख, कान आदि गुण का कार्य उससे हो रहा है। उसके हाथ-पैर आदि वास्तव में हैं नहीं, अतः अपनी बात को स्पष्ट करती हुई यह उपनिषद् कहती है—

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
सर्वस्य प्रभुमीशानं सर्वस्य शरणं बृहत् ।।

—श्वेता० ३।१७

सब इन्द्रियों के गुण उसमें भास रहे हैं, परन्तु सभी इन्द्रियों से वह रहित है। सबका वह प्रभु है, स्वामी है, इसलिए सभी के लिए वह महान् शरण है, आश्रयस्थान है, सहारा है।

उपनिषद् आगे कहती है—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपाणिपादो जवनो गृहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ॥

—श्वेता० ३।१९

वह परमपुरुष हाथ-पैररहित है, संकल्प से ही वेगवान् और ग्रहण करनेवाला है। वह बिना आँखों के देखता है, बिना कानों के सुनता है। जानने योग्य जो कुछ भी है, उसे तो वह जानता है, परन्तु उसे जाननेवाला कोई नहीं, उसी को आदिम महान् पुरुष कहते हैं।

अपादिन्द्रो अपादग्निर्विश्वे देवा अमत्सत।
वरुण इदिह क्षयत्तमापो अभ्यनूषत वत्सं संशिश्वरीरिव ॥

--ऋ० ८।६९।११

(इन्द्रः) सम्पूर्ण ऐश्वर्यों से परिपूर्ण प्रभु **(अपात्)** निराकार है। **(अग्निः)** चेतन जीव **(अपात्)** निराकार है और **(विश्वे देवा अमत्सत)** सब इन्द्रियाँ या सूर्य-चन्द्रादि देव सुख के साधन हैं। **(वरुण इत् इह क्षयत्)** सबसे उत्तम भगवान् सर्वत्र व्यापक है **(आपः तम् अभ्यनूषत शिश्वरीः इव वत्सम्)** सब स्तुतियाँ उसको प्राप्त होती हैं, जिस प्रकार वर्धक शक्तियाँ बच्चे को प्राप्त होती हैं।

यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि ईश्वर और जीव दोनों निराकार तो हैं पर ईश्वर सर्वव्यापक है और जीव एकदेशीय।

आइए, अब हम उस निराकार प्रभु का गुणगान करें।

यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति।
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ॥

अर्थात्—

भूत भविष्यत् वर्तमान का,
जो प्रभु है अन्तर्यामी।
विश्व व्योम-सा व्याप्त हो रहा,
जो त्रिकाल का है स्वामी।
निर्विकार आनन्दकन्द है,
जो कैवल्यरूप सुखधाम।
उस महान् जगदीश्वर को है,
अर्पित मेरा नम्र प्रणाम ॥

ईश्वर निर्विकार है

निर्विकार शब्द का अर्थ है, विकार से रहित। विकार का मतलब है जो वस्तु जिस रूप में है, उस वस्तु में परिवर्तन और उस परिवर्तन का भी खराबी की ओर,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और स्वच्छता का प्रवेश होगा। जब हम उस अनन्य जीवन से अपनी एकता का अनुभव करेंगे तो हममें अपूर्व धैर्य, आश्वासन और निश्चय प्राप्त होगा और उस समय हम भय से दूर और दूर होते जाएँगे। इसीलिए ऋग्वेद में कहा गया है—

सुगव्यं नो वाजी स्वश्व्यं पुंसः पुत्रां उत विश्वापुषं रयिम्।
अनागास्त्वं नो अदितिः कृणोतु क्षत्रं नो अश्वो वनतां हविष्मान्॥

—ऋ० १।१६२।२२

धनधान्य का स्वामी शक्ति-सम्पन्न प्रभु हमें गौ आदि धन, सुन्दर अश्वादि सम्पत्ति, और बलवीर्य-सम्पन्न पुरुषार्थी सन्तान तथा सब प्रकार की पुष्टि देनेवाला धन देवे, नाना दानयुक्त, व्यापक विज्ञानी प्रभु हमें राज्य दे, निर्विकार एवं अखण्डित, परमात्मा हमें पापरहित निर्दोष करे।

एक और मन्त्र में निर्विकार प्रभु का वर्णन करते हुए कहा गया है—

अदितिर्न उरुष्यत्वदितिः शर्म यच्छतु।
माता मित्रस्य रेवतोऽर्यम्णो वरुणस्य चानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः॥

—ऋ० ८।४७।९

अखण्डनीय निर्विकार परमात्मा हमें उन्नत करे। निर्विकार जगदीश्वर हमें कल्याण—ऐहिक तथा आमुष्मिक सुख प्रदान करे। वह निर्विकार परमेश्वर सबसे स्नेह करनेवाले धनी का और न्यायकारी धार्मिक राजा का मान करनेवाला है। हे विद्वानो! तुम्हारे लिए उसकी निर्दोष, पापरहित रक्षाएँ होवें तथा उसकी प्रीतियाँ तुम्हारे लिए अच्छे प्रकार से अर्थसाधिका हों।

इन मन्त्रों में निर्विकार प्रभु से धन-दौलत, आयु, यश और कीर्ति माँगी गई है। ईश्वर इन वस्तुओं को तभी देगा जब हम शक्ति के उस दैवीय प्रवाह की ओर अपने मन-मन्दिर के द्वार पूरी तरह से खोल देंगे। जब-जब मनुष्य दुराचरण की ओर प्रवृत्त होता है, जब-जब वह सत्यमार्ग से भ्रष्ट होकर असत्यमार्ग की ओर उन्मुख होता है, जब-जब हम नीचता एवं बेईमानी करते हैं, तब-तब हम सर्वशक्तिमान् निर्विकार सत्ता से अपने को दूर कर लेते हैं और उसी समय सभी प्रकार के सन्देह हमपर छा जाते हैं और हम उनसे घिरकर अपना सर्वनाश कर लेते हैं। उस समय हम उस असहाय और एकाकी बालक की भाँति हो जाते हैं, जो घोर अन्धकार में भटक रहा होता है और जिसे रोने के अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता, अतः यदि निर्भय बनना चाहते हो तो प्रभु के निर्विकार स्वरूप का ध्यान करो और स्वयं भी निर्भय बनो।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विकृति की ओर जाना विकार है। ईश्वर इस विकार से रहित है, निर्विकार है। प्रभु तो सर्वव्यापक है; अजर, अमर और अभय है, अतः उसमें विकार सम्भव ही नहीं। निर्विकार और निडरता का आपस में सम्बन्ध है। विकार दोष को कहते हैं। दोष कहाँ होगा ? जहाँ अल्पज्ञता होगी, वहाँ दोष की सम्भावना होती है। जहाँ दोष या अपराध होता है; वहाँ दुःख की सम्भावना से भय होता है। ईश्वर सर्वज्ञ है। जो सर्वज्ञ होता है, वह सर्वशक्तिमान् होता है। जो सर्वशक्तिशाली होता है वही आनन्द प्राप्त कर सकता है। जो आनन्दस्वरूप है उसे भय कहाँ ? संसार में विकार भय के कारण हैं। भय संहारक है, निर्भयता जीवनदात्री। भय शिथिल कर देनेवाला विष है, निर्भयता जीवनदायक अमृत है। भय किंकर्तव्य-मूढ़ता, निराशा और मृत्यु को जन्म देता है और निर्भयता, प्रसन्नता, शक्ति और जीवन को। भय ने कभी किसी की कोई सहायता नहीं की, निर्भयता ने अनगिनत ऐसे व्यक्तियों के जीवन बचाये हैं, जो मृत्यु के मुख में गये हुए-से प्रतीत होते थे। निराशा और विकार का समागम भय को जन्म देता है। भय उस कायर शत्रु के समान है जो पीठ पर वार करता है। भय डाकू नहीं, चोर है जो आपके सोये होने पर आपकी सम्पत्ति का हरण करता है। इस भय को दूर करने के लिए वेद ने प्रभु के निर्विकार और अभयस्वरूप का वर्णन किया है और उसकी उपासना तथा उसके गुणों को अपने में धारण करने का उपदेश दिया है। वेद कहता है—

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासते ॥

—ऋ० १।१६४।३९

जिस परम महान् भगवान् में, सम्पूर्ण देव-पदार्थ अपने-अपने अनुसार रहते हैं, जिस सर्वव्यापक, विकाररहित भगवान् में सब देव—सूर्य-चन्द्र भूमि आदि आधेय रूप से स्थित हैं, उस परब्रह्म परमेश्वर को जो नहीं जानता है, वह वेद से क्या करेगा, अर्थात् उसका वेदाध्ययन निष्फल है। जो मनुष्य उस प्रभु को जान लेते हैं, वे ही इस ब्रह्म में भली प्रकार स्थित होते हैं।

इस मन्त्र में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि विकाररहित परमेश्वर में सूर्य, चन्द्र, भूमि आदि देव स्थित हैं, अर्थात् इस संसार में तो विकार आते हैं, क्योंकि जब प्रकृति में विकृति आती है तब यह विकारवान् संसार बनता है परन्तु इस विकृतिवाले संसार का आधार विकाररहित प्रभु है। हम जब अपने विषय में, संसार के विषय में और संसार के आधार प्रभु के विषय में विचार करते हैं तो हमें पता चलता है कि सारे संसार में एक ही तत्त्व हम सबका आधार है—एक ही जीवन, एक ही सत्य वर्तमान है। हम सब उसी दैवी प्रवाह में विद्यमान हैं जो ईश्वर तक हमें ले जाता है। जब हम उस दैवी तत्त्व का अनुभव करने लगेंगे तब हमारे जीवन में अलौकिक परिवर्तन होने लगेगा। तब हममें पवित्रता, शुद्धता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

से सांसारिक कष्ट मनुष्य को भयभीत नहीं कर पाते। उस प्रभु ने इन लोक-लोकान्तरों का निर्माण कर अपने अभयस्वरूप को लोगों के सामने रखा है। जो प्रभु के इस स्वरूप का दर्शन कर लेते हैं, उन्हें संसार के कष्ट, दुःख और चिन्ताओं का भय नहीं रहता। स्वामी दयानन्द और श्रद्धानन्द के जीवनों को पढ़-सुन, चिन्तन कर और परमात्मा के अभयस्वरूप से अपना सम्बन्ध स्थापित कर। जितना समीप पहुँचेगा उतना ही आत्मा में बल आएगा। हे जीव! तू पराजित और भयभीत होकर कहाँ पड़ा है? तुझमें संसार की अनन्त शक्ति प्रवाहित हो रही है। तेरे सामने प्रभु का वह तेजस्वी और निर्भीक रूप चमक रहा है, फिर तुझे दुःख कहाँ? फिर तुझे भय कहाँ? तेरे हृदय में स्वयं भगवान् बस रहे हैं, तू क्यों डरता है? तू किस कार्य से भयभीत है? तू उठ! और अपना मार्ग देख। हे भय से डरे हुए, क्लेशों से सताए हुए मानव! तू अपने बन्द किवाड़ों को खोल-कर देख कि चारों ओर जो तुझे भय, चिन्ता और दुःख दिखाई दे रहे थे वे अब कहाँ हैं? अरे, यह तो भगवान् का जगत् है जो कि आनन्द से उत्पन्न होता है, आनन्द में स्थित है और आनन्द में ही लीन होता है। यहाँ भय और दुःख का कहाँ स्थान है? स्वामी अभयदेव जी आचार्य ने ठीक ही लिखा है "नानाविध भयों से त्रासित! तू क्यों हर समय क्षण-क्षण में अनिष्ट आशंका से संकुचित हुआ रहता है? एक बार उठकर क्यों नहीं देख लेता कि इस घर में अपना ही अपना है, यहाँ भय कैसा? यहाँ तो त्रिकाल में भी किसी का अकल्याण कैसे हो सकता है? फिर तू इस परम कल्याणमय शासन में क्यों नहीं छाती निकालकर निर्भय होकर फिरता है... अरे मूर्ख! जिसकी सर्वशक्तिमती माता हर समय जाग रही है, उसे कैसी फ़िक्र, कैसी चिन्ता?"

अतः हमें निराशा के काले बादलों पर अपनी नजर न रखकर आशा और निडरता की सुगन्धभरी ऊषा का दर्शन करना चाहिए। चिन्ता की आदत छोड़-कर समुज्ज्वल भविष्य का ध्यान करो। यह अभयस्वरूप प्रभु के ध्यान से ही सम्भव है। आइए, हम उस ओर कदम बढ़ाएँ।

ईश्वर सर्वशक्तिमान् है

ईश्वर सर्वशक्तिमान् है। सर्वशक्तिमान् का तात्पर्य यह नहीं कि ईश्वर जो चाहे वह कर सकता है। सर्वशक्तिमान् का मतलब है कि वह अपने नियमों में रहता हुआ, बिना किसी की सहायता के रचनात्मक या विनाशात्मक कार्य कर सकता है। वेद में ईश्वर को सर्वशक्तिमान् माना गया है। मन्त्र देखिए—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रभु अभय है

प्रभु सर्वज्ञ है और सर्वशक्तिमान् है, वह सर्वव्यापक है, अतः उसके लिए भय का कोई प्रश्न ही नहीं। भय तो हमें तब होता है जहाँ हमें आगे आनेवाली परिस्थिति का ज्ञान नहीं होता और ज्ञान होने पर हम अपने को उस परिस्थिति से निबटने में असमर्थ समझते हैं। परमेश्वर को सभी स्थानों और कालों का स्पष्ट ज्ञान होने से उसे भय कहाँ सतायेगा ? अथर्ववेद १।२१।१ में कहा गया है—

स्वस्तिदा विशां पतिर्वृत्रहा विमृधो वशी।
वृषेन्द्रः पुरएतु नः सोमपा अभयङ्करः॥

कल्याण देनेवाला प्रजापति, अज्ञान एवं पापनिवारक परमेश्वर, हिंसकों को वश में रखनेवाला, शक्तिशाली, संसार का रक्षक, निर्भय करनेवाला, निर्भय, अभय सकल सामर्थ्य-सम्पन्न प्रभु सदा हमारे समक्ष रहे।

ऋग्वेद २।२७।१४ बतलाता है—

अदिते मित्र वरुणोत मृळ यद्वो वयं चकृमा कच्चिदागः।
उर्वश्यामभयं ज्योतिरिन्द्र मा नो दीर्घा अभि नशन्तमिस्राः॥

हे निर्विकार ! अतः सर्वश्रेष्ठ, प्रीति करने योग्य परमात्मन् ! (**वयं यत् कच्चित् वः आगः चकृम**) हमने जो कोई आपका अपराध किया हो, उसकी शुद्धि कर दे। हे अविद्यान्धकार-विनाशक इन्द्र ! (**अभयं उरु ज्योतिः अश्याम्**) तुझ अभय महान् प्रकाशस्वरूप को हम प्राप्त करें जिससे दीर्घ अन्धकार हमें न प्राप्त हो।

ऋग्वेद ३।३०।५ में कहा गया है—

उताभये पुरुहूत श्रवोभिरेको दृळहमवदो वृत्रहा सन्।
इमे चिदिन्द्र रोदसी अपारे यत्संगृभ्णा मघवन् काशिरित्ते॥

अनेक व्यक्तियों से स्तुति करने योग्य प्रभो ! अद्वितीय, तीनों लोकों में वर्तमान, अज्ञाननिवारक, तूने कल्याण करनेवाले एवं यश प्रदान करनेवाले वेद-मन्त्रों से अपने अभयस्वरूप के विषय में दृढ़ उपदेश किया ही है। हे लोकधारक प्रभो ! तू इन असंख्य लोक-लोकान्तरों को धारण करता है। हे अनेक महिमासम्पन्न ! यह सब तेरे स्वरूप का प्रकाश ही है।

अन्धकार और व्याकुलतामयी रात्रियों से मनुष्य घिरा हुआ है। संसार में जिधर नजर दौड़ाते हैं उधर भय-ही-भय उसे दिखाई देते हैं। रोग-भय, मृत्यु-भय, धननाश का भय, निर्बल हो जाने का भय, नौकरी छिन जाने का भय, अपमान-भय, पतन-भय, दूसरे के अप्रसन्न होने का भय, चुनाव हार जाने का भय, पद न मिलने की चिन्ता। परन्तु इन मन्त्रों में बतलाया गया है कि परमेश्वर के ज्ञान

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शतं सहस्रमयुतं न्यर्बुदमसंख्येयं स्वमस्मिन्निविष्टम् ।
तदस्य घ्नन्त्यभिपश्यत एव तस्माद्देवो रोचत एष एतत् ।।

—ऋ० १०।८।२४

(शतं सहस्रम्) सौ सहस्र **(अयुतं)** दश सहस्र **(न्यर्बुदं)** दस करोड़ और **(असंख्येयं)** असंख्यात **(स्वं)** शक्ति, आत्मिक बल **(अस्मिन् निविष्टं)** इस ब्रह्म में हैं **(तत्)** उस परमेश्वर को **(अभिपश्यतः)** भली प्रकार साक्षात्कार करनेवाले **(अस्य)** महात्मा को **(घ्नन्ति)** यह प्राप्त होती है। **(तस्मात्)** उस अनन्त सामर्थ्य से **(एषः देवः)** यह दिव्यगुण-सम्पन्न प्रभु **(एतत्)** इस संसार को **(रोचते)** प्रकाशित करता है।

यह मन्त्र बतलाता है कि परमेश्वर सर्वशक्तिमान् है और उस अनन्त जीवन से हमारी एकता है। हम परमपिता परमात्मा से दूर नहीं हैं। उसकी छत्रछाया हमपर सदा विद्यमान रहती है, हमें अपूर्व धैर्य, आश्वासन और निश्चय प्राप्त होता है। हमें विश्वास हो जाता है कि हम आकस्मिक संयोगों और किस्मत के गुलाम नहीं, हम उनका संचालन करनेवाले हैं, उनके स्वामी हैं। जहाँ और जब प्रभु के इस सर्वशक्तिमान् स्वरूप की झलक हमें मिल जाती है, जब हमें यह ज्ञान होने लगता है कि सर्वशक्तिमान् प्रभु से हमारी एकता है, तब जहाँ हम पापों से बचते हैं, वहाँ कभी किसी से भयभीत नहीं होते। सन्त कवि दूलनदास ने प्रभु की सर्वशक्तिमत्ता का ध्यान कर लिखा है—

सुनत चिकार पिपीलिका, ताहि रटहु मन माँहि।
'दूलनदास' बिस्वास भजि, साहिब बहिरा नाँहि ।।

तुम उस सर्वशक्तिशाली प्रभु का नाम सदा रटा करो जो चींटी की भी आर्त-पुकार सुन लेता है। तुम उसे विश्वासपूर्वक भजो, वह जरूर सुनेगा। हमारा घटघटवासी प्रभु बहरा नहीं है।

दादूदयाल ने लिखा है—

जिहिं घट दीपक ईश का, तिहिं घट तिमिर न होइ।
उस उजियारे जोति के, सब जग देखे सोइ।।

जिस घट के अन्दर सर्वप्रकाशक प्रभु का ज्योति-दीपक जल रहा है, वहाँ कभी अज्ञान का अन्धकार प्रवेश नहीं करता, उस परम ज्योति के प्रकाश में सारा जगत् दृष्टिगोचर होता रहता है।

ऋग्वेद १०।१२१।१० में बतलाया गया है—

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।।

प्रजा के स्वामिन् परमेश्वर! इन सब जगत् के पदार्थों पर **(त्वदन्यः)** तुझसे भिन्न दूसरा कोई भी **(न परिबभूव)** स्वामित्व नहीं रखता है। **(यत् कामाः)** जिन इच्छाओं को धारण करते हुए हम सब **(ते जुहुमः)** तेरा यज्ञ करते हैं, **(तत् नः**

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अग्ने सहस्राक्ष शतमूर्द्धञ्छतं ते प्राणाः सहस्रं व्यानाः।
त्वं साहस्रस्य राय ईशिषे, तस्मै ते विधेम वाजाय स्वाहा ।।

—यजु० १७।७१

हे (सहस्राक्ष) अनन्त नेत्र और (शतमूर्द्धन्) अनन्त शिर-शक्तिसम्पन्न (अग्ने) ज्ञानस्वरूप परमेश्वर (ते प्राणाः शतम्) तेरे पास जिलाने के अनन्त उपाय हैं तथा (ते व्यानाः) तेरी मारक शक्तियां (सहस्रं) सहस्रों हैं (त्वं साहस्रस्य रायः ईशिषे) तू अनन्त ऐश्वर्यों का स्वामी है (ते तस्मै वाजाय स्वाहा विधेम) हम तेरी उस शक्ति का मन, वाणी और कर्म से आदर करें।

इस मन्त्र में परमेश्वर को अनन्त नेत्रोंवाला और अनन्त शिर-शक्तिवाला बतलाया गया है। ब्रह्मतत्त्व क्या है ? इसका उल्लेख करते हुए कहा है—

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् ।
सं बाहुभ्यां 'धमति सं पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः ।।

—यजु० १७।१९

जिसकी आंखें सर्वत्र हैं अर्थात् जो सदा-सर्वत्र प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक व्यक्ति को देख रहा है और जिसके मुख सर्वत्र विद्यमान हैं, जिसकी भुजाएँ सर्वत्र अपना कार्य कर रही हैं। वह बाहु के द्वारा कर्मानुसार जीवों को गति देता है। वह प्रभु ही द्युलोक और पृथिवीलोक को उत्पन्न करता है।

इस विशाल विश्व पर आप दृष्टिपात कीजिए और उसकी तुलना प्रभु से कीजिए तो पता लगेगा कि यह सारा संसार तो केवल उसके एक अंश में है। वह ब्रह्माण्ड से भी बहुत परे व्यापक है, निराकार है और इसी कारण से सूर्य, चन्द्र, पृथिवी आदि सारे लोकों का आधार है। वह अनन्त है। चींटी तो हाथी का अन्त पा सकती है पर मनुष्य उसका अन्त नहीं पा सकता।

सचमुच, हमारी आंख बहुत छोटी है। उसकी आंख बड़ी है। जहाँ तक वह देखता है, वहां तक हम कभी नहीं देख सकते। इसीलिए ऋग्वेद १।५२।१२ में उसकी दर्शनशक्ति का वर्णन करते हुए बताया है—

त्वमस्य पारे रजसो व्योमनः स्वभूत्योजा अवसे धृषन्मनः।
चकृषे भूमिं प्रतिमानमोजसोऽपः स्वः परिभूरेष्या दिवम् ।।

हे ईश्वर ! (अस्य रजसः व्योमनः पारे) इस अन्तरिक्ष और आकाश के परे (स्वभूति ओजा) अपनी महिमा के बल से युक्त तथा (धृषन्मनः) दृढ़ मन से युक्त तू (अवसे) हमारी रक्षा के लिए (भूमिं) भूमि की (चकृषे) रचना करता है। तू (ओजसः) शक्ति का (प्रतिमानं) नमूना हुआ है तू (अपः) अन्तरिक्ष तथा (दिवम्) द्युलोक में (परिभूः) व्यापक और (स्वः) प्रकाशस्वरूप द्यौ में (आ एषि) सर्वत्र प्राप्त है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऋग्वेद के ६।२५।५ में कहा गया है—

नहि त्वा शूरो न तुरो न धृष्णुः।

"हे प्रभो ! तुम्हारे साथ न कोई शूरवीर, न कोई शत्रुनाशक, न कोई यापनीय योद्धा और न कोई शत्रुओं का घर्षण करनेवाला ही युद्ध कर सकता है। तू सब वीरों का पराभव कर सकता है।"

ऋग्वेद के १।१००।१५ मन्त्र में बतलाया गया है—

न यस्य देवा देवता न मर्ता आपश्चन शवसो अन्तमापुः।
स प्ररिक्वा त्वक्षसा क्ष्मो दिवश्च मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती ।।

परमेश्वर की अनुपम शक्ति का कोई अन्त नहीं पा सकता। वह अपने बल से पृथिवी और द्युलोक को वश में रखता है अर्थात् वह स्वयं उनसे अधिक शक्तिशाली है। उस महान् शक्तिशाली की शक्ति जब हमारी रक्षा कर रही होती है तो भला हमारा अनिष्ट कैसे हो सकता है, हमारा दुःख कैसे रह सकता है ! तभी तो कवि ने कहा है—

आओ प्यारे, तुम्हें मिलायें वैद्यराज उस ईश्वर से।
जिसके निकट रोग नहीं आते ऐसे उस जगदीश्वर से।।
सब दुःखों का हरनेवाला जगन्नियन्ता स्वामी है।
जीवनज्योति जगानेवाला घट-घट अन्तर्यामी है।।

एक अन्य मन्त्र देखिए—

इन्द्रे विश्वानि वीर्या कृतानि कर्त्वानि च।
यमर्का अध्वरं विदुः।। —ऋ० ८।६३।६

अर्थात् जिस प्रभु को, स्तुति करनेवाले ज्ञानीभक्त, अहिंसनीय, अहिंसक जानते हैं, उस सकलैश्वर्य-सम्पन्न प्रभु में ही कृत = प्रकाशित और करिष्यमाण = अप्रकाशित सब शक्तियाँ हैं। इसलिए वेद कहता है—

वि यो रजांस्यमिमीत सुक्रतुर्वैश्वानरो वि दिवो रोचना कविः।
परि यो विश्वा भुवनानि पप्रथेऽदब्धो गोपा अमृतस्य रक्षिता।।

—ऋ० ६।७।७

जिस (सुक्रतुः) उत्तम रचना करनेवाले महान् शिल्पी (वैश्वानरः) सब विश्व के लोगों के हितकारी भगवान् ने (रजांसि) पृथिवी आदि लोकों को (वि अमिमीत) विविध प्रकार से बनाया है (कविः) जिस महान् ज्ञानी ने (दिवः) द्युलोक के (रोचनाः) चमकनेवाले सूर्यादि लोकों को (वि) बनाया (यः) जिसने (विश्वा) सभी (भुवनानि) लोकों का (पप्रथे) विस्तार किया है, वही भगवान् (अदब्धः) अदम्य शक्तियोंवाला (गोपाः) हमारी इन्द्रियों, ज्ञान, गौओं और भूमि की रक्षा करनेवाला है (अमृतस्य) अमृतसुख की (रक्षिता) रक्षा करनेवाला है।

सचमुच, भगवान् अदम्य शक्तिवाले हैं। उनकी शक्तियों को कोई दबा नहीं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ग्रस्तु) वह हम सबको प्राप्त हो ग्रौर हम सब (रयीणां पतयः) धनों के स्वामी बनें।

ऋग्वेद के निम्न मन्त्र में बतलाया गया है "परमात्मा में ग्रनेक शक्तियाँ हैं; कुछ का ज्ञान मनुष्य को है, कुछ का ग्रागे होगा, परन्तु उनका ग्रन्त पाना तो सम्भव नहीं।"

न ते ग्रन्तः शवसो धाय्यस्य वि तु बाबधे रोदसी महित्वा।
ग्रा ता सूरिः पृणति तूतुजानो यूथेवाप्सु समीजमान ऊती॥

—ऋ० ६।२६।५

हे जगदीश्वर! (ते ग्रस्य शवसः ग्रन्तः न धायि) तेरी इस शक्ति का ग्रन्त किसी से नहीं पाया जाता (तु) ग्रौर (रोदसी) द्यावापृथिवी को (विबाबधे) विशेष रीति से बाँधता है ग्रर्थात् बिना किसी सहारे के ग्राकर्षण-शक्ति द्वारा उनको स्थिर रखता है, गिरने नहीं देता। तेरी (ता ऊतीः) उन रक्षाग्रों को (समीजमानः) भली प्रकार प्राप्त करता हुग्रा ग्रौर (तूतुजानः) शीघ्र तदनुसार ग्रनुष्ठान करता हुग्रा (सूरिः) विद्वान् (ग्रप्सु) प्राणों में (ग्रापृणति) प्रसन्न होता है (इव यूथा ग्रप्सु) जिस प्रकार पशुग्रों के समूह जल में तृप्त होते हैं।

इस विराट् विश्व के दर्शन से उसकी ग्रनन्त शक्ति का पता चलता है। उसकी लीला कितनी विचित्र है बिना किसी सहारे के सभी ग्रह, उपग्रह, सूर्य ग्रौर तारों को उसने धारण किया हुग्रा है!

ऐसे सर्वशक्तिमान्, व्यापक ग्रौर सर्वस्रष्टा प्रभु से जब मनुष्य का मन लग जाता है, उससे उसकी एकता हो जाती है तब वह ग्रौर कहीं भटकना पसन्द नहीं करता। 'जगजीवन' के शब्दों में वह ग्रपना मन 'सर्वशक्तिमान्' परमात्मा ही में लगाता है—

सत समरथ में राखि मन,
करिय जगत् का काम।
'जगजीवन' यह मन्त्र है,
सदा सुक्ख विसराम॥

यदि तू सदा सुख ग्रौर शक्ति चाहता है तो यह महामन्त्र सीख ले—'तू ग्रपना मन तो सर्वशक्तिमान् परमेश्वर (सत् समर्थ पुरुष) में लगाये रख, ग्रौर जगत् के कर्तव्य कर्म करता जा।

ऋग्वेद के ५।३८।२ मन्त्र में 'शविष्ठ' शब्द द्वारा ईश्वर को शक्तिमय बतलाया गया है ग्रौर उससे प्रार्थना करते हुए कहा गया है "हे शक्तिमय ईश्वर! तू सबको भोगादि के लिए प्रशंसनीय ग्रन्न देता है जिसको न चोर चुरा सकता है, न राजा हरण कर सकता है ग्रौर न डाकू लूट सकता है, ऐसा ग्रद्भुत ज्ञानरूप धन देता है। यह तुम्हारी ही शक्ति ग्रौर महिमा है।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बड़े सुन्दर शब्दों में तीन अनादि शक्तियों का उल्लेख किया है और लिखा है—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति ॥

—ऋ० १।१६४।२०

(सयुजा सखाया) साथ मिले-जुले मित्र **(द्वा सुपर्णा)** दो सुपर्ण **(समानं वृक्षं परिषस्वजाते)** एक ही वृक्ष पर साथ-साथ रहते हैं **(तयोः अन्यः)** उनमें से एक **(स्वादु पिप्पलं अत्ति)** मीठा फल खाता है **(अन्यः)** दूसरा **(अनश्नन्)** भोग न करता हुआ **(अभिचाकशीति)** केवल प्रकाशता है।

जीवात्मा और परमात्मा दोनों प्रकृतिरूपी वृक्ष पर बैठते हैं। जीवात्मा कर्म के फल खाता है, परमात्मा कुछ न भोगता हुआ (उसके कर्मों का फल देता हुआ) प्रकाशमान होता है। ये दोनों परस्पर मित्र हैं। विशेषकर परमात्मा जीवात्मा की उत्तम सहायता करने के कारण उसका सच्चा मित्र है। उसी को पिता, माता और बन्धु आदि नामों से वेद में पुकारा गया है।

यस्मिन्वृक्षे मध्वदः सुपर्णा निविशन्ते सुवते चाधि विश्वे।
तस्येदाहुः पिप्पलं स्वाद्वग्रे तन्नोन्नशद्यः पितरं न वेद ॥

—ऋ० १।१६४।२२

(यस्मिन् वृक्षे) जिस वृक्ष में **(मध्वदः सुपर्णाः)** मीठा फल खानेवाले पक्षी **(निविशन्ते)** रहते हैं और **(विश्वे)** सब **(अधिसुवते)** सन्तान उत्पन्न करते हैं **(तस्य इत्)** उसी का ही **(स्वादु पिप्पलं आहुः)** मीठा फल है ऐसा कहते हैं। **(यः)** जो **(अग्रे)** प्रारम्भ में उस **(पितरम्)** अपने पिता को **(न वेद)** नहीं जानता **(तत् न उन्नशत्)** वह उस आनन्द को प्राप्त नहीं कर सका।

प्रकृति जगद्रूपी वृक्ष पर जो मीठे फल लगते हैं उनको जीवात्मागण खाते हैं और उसी वृक्ष पर रहकर सन्तान उत्पन्न करते हैं। इनका पिता परमात्मा है; जो उसको जानते हैं वे बन्धन से छूट जाते हैं परन्तु जो उसको जानने की परवाह नहीं करते वे सुख से दूर हो जाते हैं।

इस मन्त्र में जिस प्रकार जीवात्मा का पिता और आधार परमेश्वर को माना है उसी प्रकार ऋग्वेद के एक दूसरे मन्त्र १०।५।७ में प्रकृति का स्वामी भी परमेश्वर को बताते हुए कहा गया है—

असच्च सच्च परमे व्योमन्दक्षस्य जन्मन्नदितेरुपस्थे।
अग्निर्ह नः प्रथमजा ऋतस्य पूर्व आयुनि वृषभश्च धेनुः ॥

—ऋ० १०।५।७

बल की उत्पत्ति के समय **(अदितेः)** अविनाशी मूल प्रकृति के **(उपस्थे)** समीप स्थान पर **(परमे व्योमन्)** अत्यन्त विस्तृत आकाश में **(सत् च)** तीनों कालों में एक-जैसा रहनेवाला अधिकारी आत्मतत्त्व और **(असत् च)** उस आत्मा से भिन्न पदार्थ थे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सकता। कोई पार नहीं पा सकता। उनकी शक्तियों का पता तो इस पृथिवी तथा उसपर पाये जानेवाले लाखों प्रकार के पदार्थों को देखने से चलता है। प्रत्येक वस्तु में किस अद्भुत बुद्धि और शक्तिमत्ता का परिचय दिया गया है। जरा आँख उठाकर रात के समय आकाश में छिटकनेवाले तारों और अमृत स्यन्दन करनेवाले चन्द्रमा तथा दिन के समय अपनी प्रभा से सबको अभिभूत करनेवाले सूर्य भगवान् को निहार लो, भगवान् किस अद्भुत शक्ति और महिमा के स्वामी हैं, पता चल जाएगा। यदि हम अपनी रक्षा चाहते हैं तो उस अपरिमित शक्तिशाली का आश्रय लेना चाहिए। उसके आश्रय में जाने से ही हमारी रक्षा हो सकेगी और रक्षा के फलस्वरूप अमृतरस मिल सकेगा।

श्वेताश्वतरोपनिषद् में उसकी अद्भुत शक्ति का वर्णन करते हुए कहा गया है—

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ।।

—श्वेताश्वतर ३।१६

उसके न हाथ हैं, न पाँव हैं फिर भी अत्यन्त वेग से वह गति करता है, बिना आँख के देखता है, बिना कान के सुनता है, जो कुछ जानने योग्य है उसे वह जानता है, परन्तु उसे कोई नहीं जान पाता। सृष्टि का वही महान् आदिपुरुष—ईश्वर है।

हम आपके सामने यही कहेंगे "अरे भक्त! याद रख, ईश्वर के अलौकिक सम्बल से मनुष्य भी अनेक अद्भुत कार्य कर सकता है। संसार का प्रत्येक महान् व्यक्ति, प्रत्येक कलाकार और प्रत्येक आविष्कारक उसकी ही प्रेरणा से अपनी महत्त्वाकांक्षाएँ पूरी कर सका है। उनकी इन अलौकिक सफलताओं के पीछे ईश्वर की अद्भुत शक्ति का हाथ है। सच तो यह है कि ईश्वर के प्रकाश में कदम रखते ही मनुष्य की सब दुर्बलताएँ, सब पाप, सूर्य के सामने अन्धकार की तरह नष्ट हो जाते हैं। बस एक बार सम्पूर्ण हृदय से उस सर्वशक्तिमान् ईश्वर में विश्वास रख उसके पास जाओ वह अपने अनुपम सौन्दर्य से हमें सुन्दर बना देगा, अपनी उज्ज्वलता से हमें उज्ज्वल बना देगा और तब हम उस 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' शक्तिशाली प्रभु की अमर सन्तान बन शान्ति, शक्ति और सुख प्राप्त कर सकेंगे।

ईश्वर सर्वाधार और सबका स्वामी है

इस संसार में ईश्वर, जीव और प्रकृति तीन अनादि और अनन्त हैं। इनमें से प्रकृति और जीव का अधिष्ठाता, नियामक और नियन्ता परमेश्वर है। सत्यार्थ-प्रकाश में एक मन्त्र में स्वामी दयानन्दजी महाराज ने ऋग्वेद के एक मन्त्र द्वारा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रेममय आचरण करनेवाले लोग अपने कर्मों में तैंतीस देवों और तीन प्रकार की शक्तियों को सुरक्षित रखते हैं। उस आनन्दमय परमेश्वर में जो तेज है उसके द्वारा यह मनुष्य पुरुषार्थ करता है। ईश्वरभक्ति से मनुष्य संसार की समस्त शक्तियों का स्वामी हो जाता है और वह प्रतिदिन परमात्मा को अपना आधार अनुभव करने लगता है।

जल, स्थल, स्थावर, जंगम, वन, पर्वत आदिकों के अन्दर व्याप्त अमर परमात्मा अपनी शक्ति से रहता है। जिस प्रकार प्रजाओं का निवासक राजा होता है उसी प्रकार सबका निवासक वही है। इसलिए उसकी पूजा करनी चाहिए।

गर्भो यो अपां गर्भो वनानां गर्भश्च स्थातां गर्भश्चरथाम् ।
अद्रौ चिदस्मा अन्तर्दुरोणे विशां न विश्वो अमृतः स्वाधीः ।।

—ऋ० १।७०।२

(यः) जो (**अपां गर्भः**) जलों का आधार (**वनानां गर्भः**) वनों का सहारा (**स्थातां चरथां च गर्भः**) स्थावर और जंगमों का आश्रय है (**अद्रौ दुरोणे अन्तः**) पर्वत की गुहा के अन्दर (**अमृतः स्वाधीः**) अमर और अपनी शक्ति से विराजमान (**विशां विश्वः न**) प्रजाओं के निवासक राजा के समान रहता है (**अस्मैचित्**) इसी के लिए पूजा-अर्पण करना योग्य है।

परमात्मा को सर्वेश्वर बताते हुए एक मन्त्र में कहा है—

त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम् ।
त्वं राजा जनानाम् ।।

—ऋ० ८।६४।३

हे ऐश्वर्यसम्पन्न ईश्वर! तुम उत्पन्न पदार्थों के ईश्वर हो और अनुत्पन्न (जीव और प्रकृति) के भी अधिष्ठाता हो, तुम भविष्य में उत्पन्न होनेवाली वस्तुओं के स्वामी हो और सभी लोकों के राजा हो।

यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा अभि सूर्य ।
सर्वं तदिन्द्र ते वशे ।। —ऋ० ८।९३।४

हे वृत्रहन्=अज्ञाननाशक सूर्य के समान परमेश्वर! चारों ओर जो कुछ भी है चाहे वह प्रकट हो चाहे अप्रकट वह सब तेरे वश में है।

ईश्वर सबका पालक तथा रक्षक है। वही सबको मोक्ष प्रदान करता है। प्रत्येक वस्तु का स्वामी परमेश्वर है।

अथर्ववेद १०।८।११ में बतलाया गया है कि सब चराचर जगत् को एक ही सत्यब्रह्म का आधार है और वह आधारभूत ब्रह्म एक ही है। मन्त्र कहता है—

यदेजति पतति यच्च तिष्ठति प्राणदप्राणन्निमिषच्च यद् भवत् ।
तद्दाधार पृथिवीं विश्वरूपं तत्संभूय भवत्येकमेव ।।

अर्थात् जो चलता है, उड़ता है और जो ठहरता है; जो प्राणवाला, प्राणरहित

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस (पूर्व आयुनि) पूर्व अवस्था में (ह नः) निश्चय से हम सबके अन्दर (ऋतस्य प्रथमजाः) सत्य धर्म का पहला प्रवर्तक (अग्निः) तेजस्वी ईश्वर प्रकाशित हुआ जिसके साथ (वृषभः) बलवान् आत्मा और (धेनुः) कामधेनु बुद्धि अथवा प्रकृति थी।

प्रकृति और ईश्वर अनादिकाल से हैं। प्रकृति में बल का संचार ईश्वर करता है। ब्रह्माण्ड की सूक्ष्म अवस्था से पूर्व ब्रह्माण्ड अव्याकृत अवस्था में होता है अर्थात् प्रकृति की अपनी कारणावस्था में होता है। इस अव्याकृत अवस्था का नियामक होने से परमात्मा का नाम ईश्वर है। परमात्मा अपना ईशन् (ईश+वर) अपना नियमन का कार्य मुख्य रूप से इस अव्याकृत अवस्था द्वारा करता है। जगत् के मूल कारण में लगी हुई परमात्मा की ईशन शक्ति ही मूल कारण की परिणत अवस्थाओं में भी ईशन का काम दे रही है। जिस प्रकार मशीन के पुर्जे में गति देने से समग्र मशीन गति में हो जाती है इसी प्रकार मूल कारण में प्रेरणा देनेवाली ईशन शक्ति ही स्थूल तथा सूक्ष्म जगत् में भी ईशन का कार्य कर रही है, अतः ईशन शक्ति का मुख्य सम्बन्ध चूंकि मूल कारण के साथ हुआ करता है तथा कार्यों में ईशन शक्ति का प्रभाव मूल कारण के द्वारा आया करता है, अतः जगत् के मूल कारण का नियामक होने के कारण परमात्मा को ईश्वर (ईशन शक्तिवाला) कहा जाता है। सत्य धर्म का पहला प्रवर्तक ईश्वर है। बल और पोषकशक्ति, बलवान् आत्मा और सुबुद्धि ये सब परमेश्वर के साथ रहते हैं अर्थात् परमेश्वर से सबको बल प्राप्त होता है और परमात्मा से उत्तम बल प्राप्त करके ही सब अपना कार्य योग्य रीति से करने में सफलता और सुफलता प्राप्त करते हैं।

एक अन्य मन्त्र में परमेश्वर को सर्वाधार माना गया है—

वया इदग्ने अग्नयस्ते अन्ये त्वे विश्वे अमृता मादयन्ते।
वैश्वानर नाभिरसि क्षितीनां स्थूणेव जनाँ उपमिद्ययन्थ ।।

—ऋ० १।५६।१

(अग्ने) हे अग्ने ! (ते अन्ये अग्नयः) वे दूसरे अग्नि=जीव (त्वे) तेरे अन्दर (वया इत्) शाखाओं के समान ही हैं अर्थात् आश्रित हैं। वे सब (अमृताः) मुक्त होकर तुझसे (मादयन्ते) आनन्द पाते हैं। (वैश्वानर) सर्वनियन्ता ईश्वर ! तू (क्षितीनां नाभिः) सब लोकों का केन्द्र है (स्थूणा इव) स्तम्भ के समान (जनान्) सब जनता का तू (उपमित्) समीपस्थ होता हुआ (ययन्थ) नियमन करता है।

इस सर्वाधार ईश्वर की शक्ति और सहायता प्राप्त करने के लिए और शक्तियों का स्वामी बनने के विषय में वेद कहता है—

त्र्यायुषं जमदग्नेः (?)

अर्वास्त्वशद्देवतास्त्रीणि च वीर्याणि प्रियायमाणा जुगुपुरप्स्वन्तः।
अस्मिंश्चन्द्रे अधि यद्धिरण्यं तेनायं कृणवद् वीर्याणि ।।

—अ० १९।२७।१०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जो भूत और भविष्यकालीन सबका अधिष्ठाता है और जिसकी आत्मीयता का आनन्द ही कैवल्य है उस ज्येष्ठ ब्रह्म को नमस्कार है।

इन्द्रो दिव इन्द्र ईशे पृथिव्या इन्द्रो अपामिन्द्र इत्पर्वतानाम्।
इन्द्रो वृधामिन्द्र इन्मेधिराणामिन्द्रः क्षेमं योगे हव्य इन्द्रः॥

—ऋ० १०।८९।१०

अर्थात् परमेश्वर ही द्युलोक का अधिष्ठाता है, परमेश्वर ही पृथिवी का, परमेश्वर ही जलों का, परमेश्वर ही पर्वतों तथा मेघों का, परमेश्वर ही वृद्धिशीलों का, **(इन्द्रः इत् मेधिराणाम्)** इन्द्र ही मेधावियों या इकट्ठे कार्य करनेवालों का स्वामी है। योग और क्षेम में ईश्वर ही स्मरण करने योग्य है।

सचमुच जब हम अपनी दृष्टि उठाकर इस विराट् विश्व को देखते हैं तो हमें इस विश्व की रचना, पालन और संहार में उस विराट् प्रभु का हाथ दिखाई देता है जिसका एक-एक नियम अटूट और अविचल है, जिसकी व्यवस्था अचम्भे में डालती है, जिसका न्याय अक्षुण्ण और अपूर्व है, सम्पूर्ण विषयों के वेद जिसके निःश्वासमात्र हैं, अनन्तकाल से संसार में प्रकाश का प्रसार करनेवाले सूर्य और चाँद जिसके निमेषमात्र हैं, ऊँची लहरों में उमड़ता असीम समुद्र जिसकी आज्ञा से सीमा न छोड़ने के लिए विवश है और जिसके हुक्म को बजाने के लिए हजारों आत्माएँ हर वक्त हाथ जोड़कर खड़ी रहती हैं।

इसलिए आइए, हम सर्वाधार सर्वेश्वर प्रभु से प्रार्थना करें—

छोड़ नटनागर तुम्हें, जाऊँ कहाँ ?
तुम-सा वरदाता भला पाऊँ कहाँ ?
कीर्ति दो, धन दो प्रभो ! बल दो मुझे,
पूर्ण हो सब कामना, पुत्र दो मुझे,
गा रहीं सब वाणियाँ तुमको यहाँ,
भेंट मैं अन्यत्र पहुँचाऊँ कहाँ ?

ईश्वर अजर और अमर है

इन्द्रमेव धिषणा सातये धाद्, बृहन्तमृष्वमजरं युवानम्।
अषाळ्हेन शवसा शुशुवांसं, सद्यश्चिद्यो वावृधे असामि॥

—ऋग्वेद ६।१९।२

(यः) जो **(धिषणा)** बुद्धि या कर्म से **(सातये)** सत्कार के लिए, पूजा के लिए **(बृहन्तम्)** सर्वमहान् **(युवानम्)** सदा जवान **(ऋष्वम्)** पूर्ण ज्ञानी **(अषाळ्हेन शवसा शूशुवांसम्)** असह्यबल से युक्त होकर सर्वत्र व्याप्त **(अजरं)** जरारहित

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और सत्ता की आरम्भिक अवस्था में है, इन सबमें जो वर्तमान है, वही पृथिवी और द्युलोक को आधार देता है, प्रलयावस्था में वह ब्रह्म सबके साथ मिलकर एक ही होता है अर्थात् जीव और प्रकृति अव्याकरणीय अवस्था में हो जाते हैं। केवल सत्पदवाच्य होते हैं।

यतः सूर्य उदेत्यस्तं यत्र च गच्छति।
तदेव मन्येऽज्येष्ठंहं तदु नात्येति किं चन ।।

—अ० १०।८।१६

जहाँ से सूर्य उदय होता है और जहाँ वह अस्त होता है वही श्रेष्ठ ब्रह्म है। कोई भी उसका उल्लंघन नहीं करता।

वेदाहं सूत्रं विततं यस्मिन्नोताः प्रजा इमाः।
सूत्रं सूत्रस्याहं वेदाथो यद् ब्राह्मणं महत् ।।

—अ० १०।८।३८

अर्थात् जिसमें ये सब प्रजाएँ ओतप्रोत हैं, उस फैले हुए सूत्र को मैं जानता हूँ और सूत्र के सूत्र को भी जानता हूँ और बड़ा ब्रह्मज्ञान भी मैं जानता हूँ।

यस्मिन्त्स्तब्ध्वा प्रजापतिर्लोकान् सर्वाँ अधारयत्।
स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ।।

—अ० १०।७।७

अर्थात् जिसमें रहकर प्रजापति सब लोकों का स्तम्भन करके धारण किये करता है, वह आधारस्तम्भ है ऐसा तू कह। वह निश्चय करके आनन्दस्वरूप परमात्मा है।

यत्र लोकांश्च कोशांश्चापो ब्रह्म जना विदुः।
असच्च यत्र सच्चान्तः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ।।

—अ० १०।७।१०

ज्ञानी लोग जिसमें सब लोकों और सब कोशों को तथा मूल प्रकृति को और ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करते हैं तथा जगत् और जीवात्मा भी जिसके भीतर हैं, वही सर्वाधार है ऐसा तू कह। वह अत्यन्त आनन्दरूप है।

यस्मिन् भूमिरन्तरिक्षं द्यौर्यस्मिन्नध्याहिता।
यत्राग्निश्चन्द्रमाः सूर्यो वातस्तिष्ठन्त्यार्पिताः
स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ।।

—अ० १०।७।१२

जिसमें भूमि, अन्तरिक्ष और द्युलोक रहते हैं, जिसमें अग्नि, चन्द्र, सूर्य, वायु—ये देव रहते हैं वही सबका आधारस्तम्भ है, वही आनन्दमय है, ऐसा तू कह।

यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति।
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ।।—अ० १०।८।१

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दे दी। परिवार के सभी स्त्री, पुरुष और बच्चे अपने कन्धों और पीठ पर सामान लादे चले जा रहे थे। बोझ से उनकी कमर झुकी जा रही थी, पाँव लड़खड़ा रहे थे, प्यास से कण्ठ सूखे जा रहे थे और सब हाँफ रहे थे। उनमें एक पुरुष खाली हाथ था। वह दार्शनिक था वायस।

'क्या तुम्हारे पास ले चलने को कोई सामान नहीं है? क्या तुम अपने साथ कुछ भी नहीं ले चल रहे हो?' बोझ से दबे जाते हुए उसके साथियों ने उससे पूछा।

एक स्त्री ने दयापूर्ण दृष्टि डालते हुए कहा "ओह, वेचारा कितना गरीब है, उसके पास ले-जाने को कुछ है ही नहीं!"

दार्शनिक हँसा, उसने मुस्कराते हुए कहा, "अपने साथ मैं अपनी सारी पूंजी ले-चल रहा हूँ।"

उसकी पूंजी आत्ममन्थन से निकले हुए विचार थे जिन्हें वह अपने मस्तिष्क में अपने साथ लिये जा रहा था। उसकी वह अदृश्य पूंजी सदा उसके साथ रहती थी। यह ज्ञान की पूंजी ऐसी पूंजी है जो आनन्दस्वरूप परमेश्वर से मनुष्य का सम्पर्क जोड़ देती है। यह प्रभु की बुद्धि या ज्ञान द्वारा उपासना का मार्ग खोल देती है। जो प्रभु के आनन्दमय, सर्वशक्तिशाली रूप का मर्म समझ लेता है उसे कष्ट नहीं हो सकता है। इसीलिए वायस चिन्तामुक्त था—दुःखों से परे था। उसकी पूंजी=ब्रह्मज्ञान सबसे महान् थी।

इसके बाद के मन्त्रों में परमेश्वर से अन्न, धन और बल की प्रार्थना की गई है और परमेश्वर को पराजित न होनेवाला बताया गया है। परमेश्वर से इन वस्तुओं की जब हम माँग या प्रार्थना करते हैं, उस समय कभी-कभी हम यह सोचने लगते हैं कि परमेश्वर उन वस्तुओं को उठाकर हमें दे देगा। सोमनाथ के पुजारी सोमनाथ भगवान् से रक्षा की प्रार्थना करते रह गये परन्तु, सोमनाथ उनकी रक्षा न कर सका। मन्दिर लुट गया। भगवान् की मूर्ति टूट गई, वे पराजित हो गये। प्रार्थना करनेवाले कत्ल कर दिये गये। क्यों? क्योंकि मूर्ति पत्थर की थी—वह भगवान् का वास्तविक स्वरूप न था। दूसरी बात यह थी कि भगवान् स्वयं रूप धारण कर या स्वयं प्रकट होकर मनुष्य को बचा नहीं सकता। शरीर और आत्मा ये दो वस्तुएँ हैं। शरीर और आत्मा की इच्छाओं में अन्तर भी होता है। आत्मा की इच्छाएँ वास्तव में ईश्वरीय प्रेरणा का फल हैं। जिस समय मनुष्य के हृदय या आत्मा में परमेश्वर की शक्ति का उदय हो जाता है, जब उसके प्रति अटल विश्वास जाग्रत् हो जाता है, मनुष्य में एक अद्भुत शक्ति, अद्भुत बल आ जाता है। उस समय वह अपने को प्रभु के समान शक्तिशाली अनुभव करने लगता है और उसके मुँह से निकल पड़ता है **'अहमिन्द्रो न पराजिग्ये'**। मैं इन्द्र हूँ—मैं किसी से कभी पराजित हो ही नहीं सकता। सचमुच, जिसके ऊपर प्रभु की कृपा है वह अपने को वैसा समझे भी क्यों नहीं? इसलिए उस समय उसकी अभिलाषाएँ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(इन्द्रम्) सर्वैश्वर्यवान् भगवान् को **(धात्)** धारण करता है वह **(सद्यः)** शीघ्र **(असामि)** अद्वितीय अथवा अत्यन्त **(वावृधे)** वृद्धि को प्राप्त होता है।

इस मन्त्र में बतलाया गया है कि परमेश्वर सदा युवा रहता है, वह जरा अर्थात् बुढ़ापे से रहित है। मनुष्य को चाहिए कि वह अपनी बुद्धि तथा कर्म द्वारा उसकी पूजा करे। वेद में अनेक स्थलों पर परमेश्वर को अजर और अमर कहा गया है। ऋग्वेद में बतलाया गया है—

अश्याम तं काममग्ने तवोती अश्याम रयिं रयिवः सुवीरम्।
अश्याम वाजमभि वाजयन्तोऽश्याम द्युम्नमजराजरं ते।।

—ऋ० ६।५।७

हे **(अजर अग्ने)** क्षीण और जीर्ण न होनेवाले तेजस्वी देव ! **(तव ऊती)** तेरे रक्षणों के द्वारा **(कामं अश्याम्)** हम मन की कामना को प्राप्त करें, हे **(रयिवः)** धन-युक्त ! **(सुवीरं रयिं)** उत्तम वीरों से युक्त धन को **(अश्याम)** प्राप्त करें। **(अभिवाजयन्तः)** सब प्रकार से भोग्य अन्न की इच्छा करनेवाले हम **(वाजं अश्याम)** अन्नादि प्राप्त करें तथा **(ते अजरं द्युम्नम्)** तेरे क्षीण न होनेवाले प्रकाशमान यश को **(अश्याम)** प्राप्त करें।

वेद के एक मन्त्र में ईश्वर को अमर बतलाया गया है और उससे धन और ऐश्वर्य की कामना की गई है—

अहमिन्द्रो न परा जिग्य इद्धनं न मृत्यवेऽवतस्थे कदा चन।
सोममिन्मा सुन्वन्तो याचता वसु न मे पूरवः सख्ये रिषाथन।।

—ऋ० १०।४८।५

(अहमिन्द्रः न परा जिग्ये) मैं ऐश्वर्यसम्पन्न, सर्वप्रकाशक कभी किसी से पराजय को प्राप्त नहीं होता **(न कदाचन मृत्यवे अवतस्थे)** और न ही कभी मृत्यु को प्राप्त होता हूँ, अर्थात् अमर हूँ, **(धनम् इत)** धनादि ऐश्वर्य का प्रदाता मैं ही हूँ। **(सुन्वन्तः)** धनादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए यत्न करते हुए तुम **(वसु)** विज्ञानादि धन को **(मा सोमं इत्)** मुझ ईश्वर ही से **(याचत)** माँगो **(पूरवः)** हे विज्ञानी भक्तो ! **(मे सख्ये न रिषाथन)** मेरी मैत्री में तुम्हें कष्ट न होगा।

इन मन्त्रों में ईश्वर को अजर और अमर बतलाया गया है। पहले मन्त्र में इसे अजर और सदा युवा रहनेवाला बताते हुए पूर्ण ज्ञानी, असह्यबल से युक्त होकर सर्वत्र व्यापक, सर्वैश्वर्यवान् भगवान् को बुद्धि और कर्म द्वारा प्राप्त करने की बात कही गई है।

बुद्धि या ज्ञान द्वारा भगवान् को प्राप्त करनेवाला व्यक्ति सांसारिक कष्टों, दुःखों और विपत्तियों के प्रति निश्चिन्त रहता है। दो हजार वर्ष पहले यूनान के एक नगर को शत्रुओं ने जीत लिया। नगरनिवासी वीरता से लड़े थे, अतः विजेताओं ने नगरवासियों को जितना सामान वे ले जा सकें, ले जाने की स्वीकृति

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीवन की गति का अवरुद्ध होना ही मृत्यु है। जब हमारा कदम आगे बढ़ने से रुक जाता है, मृत्यु हो जाती है। साहसहीन और निराश व्यक्ति साँस लेते हुए भी मृतवत् ही होते हैं। इसलिए इनको दूर करने के लिए उस देदीप्यमान और तेजस्वी, गतिशील और युवा परमेश्वर का ध्यान करना चाहिए। वह हमें अपनी प्रेरणा से प्रेरित करेगा, वह हमें अपने जीवन से जीवित करेगा, वह हमें प्राण से अनुप्राणित करेगा। उसके द्वारा बताये हुए मार्ग और उसकी दी प्रेरणा का उदय अपनी अन्तरात्माओं में कीजिए और आशा तथा विश्वास के साथ जीवन में बढ़ते चलिए, तो कोई भी कठिनाई आपकी प्रगति नहीं रोक सकती। जब आप अपनी ईश्वरीय शक्ति को पहचान जाएँगे, तब आपका खोया साहस लौट आएगा। आप अपने विषय में एक नवीन दृष्टिकोण लेकर चल सकेंगे, अर्थात् बिल्कुल नया जीवन पा लेंगे।

बुढ़ापा और मृत्यु तो भाग्यहीनों के लिए है। ईश्वरविश्वासी न बूढ़ा होता है, न मरता है। इसलिए प्रभु के अजर और अमर रूप के उपासको! आप केवल उसके इन गुणों का मुख से उच्चारणमात्र ही मत करो, इन्हें अपने में धारण भी करो। उठो और प्रकाश की ओर, जीवन की ओर, अभ्युदय की ओर बढ़ चलो। भाग्य को कोसना छोड़कर साहसी और सफल जीवन बनाकर दिखाओ जो तुम्हारा प्रभु तुमसे चाहता है। अपने-आपसे कहो—'मैं उस अजर और अमर, कभी पराजित न होनेवाले, कभी न मरनेवाले प्रभु का प्रतिनिधि हूँ, फिर निराश होने का क्या कारण है? मेरा निराश और निरुत्साहित होना ईश्वर को कभी स्वीकार नहीं। मैं जीवन में सरलता या पराजय के लिए नहीं आया। मैं स्वयं विजय हूँ। मैं वीर, साहसी और विजेता हूँ, परिस्थितियों का दास नहीं। मैं स्वतन्त्र हूँ, बन्दी नहीं। मैं साहस हूँ, मैं शक्ति हूँ—आत्मविश्वास हूँ। मेरा तो यही निश्चय है—यही विश्वास है कि मेरे सारे जीवन की डोर उस सर्वशक्तिमान्, अजर और अमर प्रभु के हाथ में है जो सारे विश्व का नियन्ता है।'

इस विश्वास के साथ जीवन में चलनेवाला मनुष्य कभी असफल नहीं हो सकता, यही इन मन्त्रों का भाव है।

अजर-अमर प्रभु की सन्तानो! तुम्हारा अस्तित्व विनाश और परिवर्तन से ऊपर है। तुम अमर हो, तब तुम्हें जीवन में घबराने की आवश्यकता क्या? साधारण बातों से घबराओ मत! परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करो! तुम्हें अन्न, बल, शक्ति, ऐश्वर्य और जीवन प्राप्त होगा। आइए हम प्रभु से कहें—

तुम शक्तिमान्, तुम ज्ञानवान्, तुम ऐश्वर्यों की सकल खान।
भर दो घर दो मुझमें अपनी, सब-की-सब जो निधियाँ महान्॥
हे देव, मेरे देव···
मैं जिससे मानव-धर्म पाल, सब तोड़ विश्वबन्धन कराल।
बन राम कृष्ण और दयानन्द तुममें लय हो जाऊँ कृपाल॥
हे देव, मेरे देव···

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रभु की प्रेरणाएँ बन जाती हैं। ये अभिलाषाएँ हमारे मन के द्वार खोलकर हमें सफलता का मार्ग दिखला देती हैं। प्रत्येक व्यक्ति को जो परमेश्वर के इस 'अजर' और 'अमर' रूप का ध्यान कर अपनी वास्तविकता को समझ लेता है, उसे यह ईश्वरी शक्ति जीवन में निर्भीकता प्रदान करती है—आगे बढ़ाती है। उनमें आत्मविश्वास जाग्रत् होता है। यह आत्मविश्वास आपत्तियों और विरोधों में भी अपने मार्ग पर डटे रहने की प्रेरणा देता है। यह निश्चित है कि इस ईश्वरविश्वास के बल पर जो अपने लक्ष्य पर डटे रहते हैं, जो अड़चनों से टक्कर लेते हुए, अपनी मंजिल की ओर लगातार बढ़ते रहते हैं, विजय उन्हें ही मिलती है।

कोलम्बस ऐसा ही साहसी नाविक था। अपने साथी मल्लाहों के घोर विरोध और मार देने तक की धमकी से भी वह नहीं घबराया। उन दिनों लिखी उसकी डायरी के ये शब्द 'आज हमारा जहाज दक्षिण की ओर इतना आगे बढ़ा, क्योंकि यही हमारा लक्ष्य था'—इसका प्रमाण है कि लक्ष्य और केवल लक्ष्य ही उसकी आँखों के सामने रहता था। उसका जहाज दक्षिण की ओर चलता ही गया जब तक वह अपने लक्ष्य तक पहुँच नहीं गया। यह होता है ईश्वरीय शक्ति की प्रेरणा का फल!

ईश्वर का 'अजर' और 'अमर' रूप हमें विश्वास दिलाएगा कि वह परमेश्वर कभी मरता नहीं है और कभी बूढ़ा नहीं होता है, इसलिए वह सदा हमारे साथ शक्तिमान् के रूप में विद्यमान रहता है अर्थात् जो व्यक्ति अजर और अमर ईश्वर की छत्रछाया में रहता है, ईश्वर उसकी रक्षा करता है। अगर हम उसके संरक्षण में रहते हुए उसपर विश्वास करेंगे तो वह विश्वास हमारी ढाल बनकर हमारी रक्षा करेगा। वास्तव में जब 'अजर' परमेश्वर का 'अमर' रूप हमारी दृष्टि और मन में रहता है तब हम उस सर्वशक्तिशाली परमेश्वर की स्थायी छत्रछाया का अनुभव करते हैं, तब भय और कमजोरी दूर होती हैं। निर्भयता और साहस के आने से हम कर्मक्षेत्र में अवतीर्ण होते हैं और आगे बढ़ने लगते हैं। ईश्वर में विश्वास मन में साहस लाता है। साहस मन का सम्राट् है। उसके विकास के साथ ही अन्य मानसिक शक्तियाँ विकसित होने लगती हैं और उसके पतन के साथ अन्य मानसिक शक्तियाँ भी अपना काम छोड़ देती हैं। साहस के नेतृत्व के बिना कोई भी शक्ति आगे नहीं बढ़ती। परन्तु साहस जब मार्ग दिखाता है तो अन्य शक्तियाँ भी उभरकर सामने आ जाती हैं। शक्तियों के सामने आने से मनुष्य को अन्न, बल, शक्ति और धन भी प्राप्त होता है। इसीलिए इस मन्त्र में प्रभु से यह प्रार्थना की गई।

निराशा और भय से छुटकारा पाने के लिए **'अहमिन्द्रो न पराजिग्ये'** मैं इन्द्र हूँ, कभी पराजित नहीं हो सकता हूँ, **'न मृत्यवे अवतस्थे कदाचन'** कभी मृत्यु को प्राप्त नहीं कर सकता हूँ—इन रूपों का ध्यान करना चाहिए। मृत्यु क्या है?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लेख में ठीक ही लिखा है—

यह पवित्र अनन्त विश्वात्मा आनन्द और शक्ति का स्रोत है। ज्योंही हम उसके साथ एकता स्थापित कर लेते हैं, त्योंही शान्ति और एकत्व की धारा का रसास्वादन हमें मिलने लगता है, क्योंकि शान्ति का मतलब ही है—एकत्व की स्थापना करना। एक गम्भीर आन्तरिक अभिप्राय इस सत्य की जड़ में काम कर रहा है। इस तथ्य को पहचानना कि हम आत्मा हैं और इसी विचार में निमग्न रहना कि हमें अध्यात्म की ओर मुँह करना है और इस प्रकार एकता और शान्ति का वातावरण पैदा करना है। हमारे इर्द-गिर्द लाखों स्त्री-पुरुष चिन्ता से दुःखी और अशान्त दिखाई पड़ते हैं जो इधर-उधर शान्ति के लिए भटक रहे हैं, और जिनके शरीर और आत्मा थकावट से चूर हैं वे शान्ति की तलाश में दूसरे देशों की यात्रा करते हैं, पृथिवी की प्रदक्षिणा करते हैं, तीर्थों की हवा खाते हैं, हरिद्वार में जाकर डुबकियाँ लगाते हैं, मुक्ति की तलाश में काशी या प्रयाग की धूल फांकते हैं। किन्तु शोक ! उन्हें कभी भी शान्ति नहीं मिलती। मिले भी कैसे ? वे तो जहाँ शान्ति है वहाँ जाते ही नहीं। जहाँ शान्ति की छाया तक नहीं, वहाँ तलाश करते हैं। शान्ति केवल आत्मा में मिल सकती है। कठोपनिषद् में शान्ति के लिए नचिकेता को यम ने 'ओ३म्' नाम का चिन्तन और उसको हृदय में लाने का उपदेश दिया है। वहाँ आया है—

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति, तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत् ।।

—कठोपनिषद् १।२।१२

जिस पद का प्रतिपादन सारे वेद करते हैं, समस्त तप जिसे बतलाते हैं, जिसकी प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य धारण किया जाता है, संक्षेप में वही पद कहता हूँ। वह है ओ३म् ! 'ओ३म्' ईश्वर का निज नाम है। योगी याज्ञवल्क्य ने कहा—**"वाच्यः स ईश्वरः प्रोक्तो वाचकः प्रणवः स्मृतः।"** प्रणव या ओंकार परमात्मा का प्रतिपादक है। योगदर्शन में कहा है—**"तस्य वाचकः प्रणवः"** उस परमेश्वर का वाचक ओ३म् है। वेदों के अनुसार अनन्तता ईश्वर का एक भुज है। सान्त सर्वत्र और सब समय रह नहीं सकता। अनन्त के बिना न्याय नहीं हो सकता और न कर्मों का यथोचित फल ही मिल सकता है, अतः अनन्त प्रभु ही सुख देनेवाला, भूत, भविष्यत् और वर्तमान का ज्ञाता हो सकता है। परमेश्वर का बल अनन्त है। वह द्युलोक और पृथिवीलोक से बहुत बड़ा है। उसकी रक्षा में रहने से नाश नहीं हो सकता।

न यस्य द्यावापृथिवी अनु व्यचो न सिन्धवो रजसो अन्तमानशुः।
नोत स्ववृष्टिं मदे अस्य युध्यत एको अन्यच्चकृषे विश्वमानुषक् ।।

—ऋ० १।५२।१४

(द्यावापृथिवी) द्युलोक और पृथिवी लोक **(यस्य व्यचः)** जिसकी व्यापकता या

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ईश्वर अनन्त और अनुपम है

अनन्तं विततं पुरुत्रानन्तमन्तवच्चा समन्ते ।
ते नाकपालश्चरति विचिन्वन् विद्वान् भूतमुत भव्यमस्य ।।
—अ० १०।८।१२

(अनन्तं) अन्तरहित ब्रह्म (पुरुत्रा) सर्वत्र (विततं) फैला हुआ है। (समन्ते) मिले हुए (अनन्तं) अनन्त (अन्तवत् च) और अन्तवाला (ते) इन दोनों को (विचिन्वन्) अलग-अलग करता हुआ (उत अस्य भूतं भव्यम्) तथा इसके भूत और भविष्य को (विद्वान्) जाननेवाला (नाकपालः) सुख का पालनकर्त्ता होकर (चरति) विचरता है।

ऋग्वेद १।१००।१५ में कहा है—परमेश्वर के बल का अन्त कोई भी नहीं पा सकता। वह द्युलोक और पृथिवी से बड़ा है। उसकी रक्षा में रहने से कभी नाश नहीं होगा—

न यस्य देवा देवता न मर्ता आपश्चन शवसो अन्तमापुः ।
स प्ररिक्वा त्वक्षसा क्ष्मो दिवश्च मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती ।।

(देवाः देवताः) विद्वान् और सूर्य-चन्द्रादि (मर्ताः) मनुष्य अथवा (आपः) जल भी (यस्य शवसः अन्तम्) जिसके बल का अन्त (न आपुः) नहीं प्राप्त कर सकते (स मरुत्वान् इन्द्रः) वह जीवनाधार प्रभु (दिवः क्ष्मः च) द्युलोक और पृथिवीलोक को (त्वक्षसा प्ररिक्वा) बल से रिक्त करनेवाला (नः ऊती भवतु) हमारी रक्षा करनेवाला है।

अन्तवाले अर्थात् मर्यादा से युक्त जगत् के अन्दर अनन्त अर्थात् मर्यादा-रहित परमात्मा फैला हुआ है। अनन्त, सान्त एक-दूसरे के साथ मिले-जुले हैं। इसके विवेक को जाननेवाला ज्ञानी आगे उन्नति करता है।

संसार में मनुष्य सुख और शान्ति चाहता है। विश्व में सुख और शान्ति लाने का सर्वोत्कृष्ट उपाय यह है कि हम अपना सुख अनन्त और अनुपम भगवान् को अर्पित करें। जितने दर्जे तक हम अपनी एकता, अपना सम्बन्ध उस अनन्त प्रभु से करेंगे, जितने दर्जे तक हम उस ब्रह्मधारा को अपने मन में स्थान देंगे उतने दर्जे तक उस महान् शक्तिशाली प्रभु के प्रेम और सौन्दर्य का सम्बन्ध कर शान्तिलाभ करेंगे। सचमुच यह बात बहुत ही ठीक है। हम अनन्त से आ रहे हैं। अनन्त में हमारा निवास है और अनन्त की ओर हम जा रहे हैं। इसलिए हे भद्र पुरुषो! सत्यज्ञान के रत्नों का संचय करो, क्योंकि वही तुम्हारी सच्ची निधि है, जो तुम्हारे साथ जाती है। स्वामी सत्यदेव परिव्राजक ने 'अखण्ड शान्ति की अनुभूति'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हे (**मधवन् इन्द्र**) धनवान् प्रभो ! (**ते समस्य महिमनः**) तेरी सम्पूर्ण महिमा का (**नहि विद्‌मा**) ज्ञान हमें नहीं है। तेरे (**मघवत्त्वस्य न विद्‌म**) ऐश्वर्य का भी पूर्ण ज्ञान हम नहीं कर सकते। (**नूतनस्य राधसो राधसः**) तेरी नूतन सिद्धियों का भी हमें ज्ञान नहीं है। (**इन्द्र**) हे भगवन् ! (**ते इन्द्रियम्**) तेरी शक्तियों का भी (**न किः ददृशे**) हमें दर्शन नहीं हुआ है।

ऋग्वेद ६।१८।१२ में कहा है—

प्र तुविद्युम्नस्य स्थविरस्य घृष्वेर्दिवो ररप्शे महिमा पृथिव्याः।
नास्य शत्रुर्न प्रतिमानमस्ति न प्रतिष्ठिः पुरुमायस्य सह्योः।।

(**तुवि-द्युम्नस्य**) अत्यन्त तेजस्वी (**स्थविरस्य**) स्थिर और (**घृष्वेः**) दुष्टता को पीसनेवाले ईश्वर की (**महिमा**) महत्ता द्युलोक और पृथिवीलोक की मर्यादाओं से बाहर (**ररप्शे**) फैली है। (**न अस्य शत्रुः**) इस ईश्वर का कोई शत्रु नहीं है। (**न अस्य प्रतिमानं**) न इसकी कोई प्रतिमा है। (**पुरुमायस्य**) अनन्त ज्ञानवाले (**सह्योः**) और अनन्त शक्तिवाले बलवान् ईश्वर को छोड़कर और कोई (**प्रतिष्ठिः**) आश्रय (**न**) नहीं है अर्थात् वही एक सबका आश्रय है।

ऋ० १।५२।१३ में बताया गया है—

त्वं भुवः प्रतिमानं पृथिव्या ऋष्ववीरस्य बृहतः पतिर्भूः।
विश्वमाप्रा अन्तरिक्षं महित्वा सत्यमद्धा नकिरन्यस्त्वावान्।।

अर्थात्—हे जगदीश्वर (**त्वम्**) तू (**भुवः पृथिव्याः प्रतिमानम्**) आकाश और भूमि के परिमाण का कर्त्ता तथा (**बृहतः**) महाबली (**ऋष्ववीरस्य**) महाभुजयुक्त जगत् तथा महावीर मनुष्य का (**पतिर्भूः**) पालक है और (**अन्तरिक्षम्**) सम्पूर्ण अन्तरिक्ष [अवकाश] को एवं (**सत्यम्**) अविनाशी जीव तथा प्रकृति को (**महित्वा**) अपनी महती व्याप्ति से (**अद्धा आप्रा**) साक्षात् पूर्ण कर रहा है। सचमुच (**त्वावान्**) तुझ जैसा (**अन्यः**) दूसरा (**न कि**) नहीं है।

ऋग्वेद के ७।३२।२३ में आया है—

न त्वावाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते।
अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे।।

हे (**मघवन् इन्द्र**) ऐश्वर्यसम्पन्न प्रभो ! (**दिव्यः**) द्युलोक में उत्पन्न और (**पार्थिवः**) पृथिवी पर उत्पन्न (**त्वावान् अन्यः**) तेरे सदृश कोई दूसरा (**न जातः**) नहीं हुआ और (**न जनिष्यते**) नहीं होगा। (**अश्वायन्तः**) घोड़ों की (**वाजिनः**) बल और अन्न की (**गव्यन्तः**) गौओं की इच्छा करनेवाले हम (**त्वा हवामहे**) तुम्हारी ही उपासना करते हैं।

सामवेद २०३ में बताया गया है—

न कि इन्द्र त्वदुत्तरं न ज्यायो अस्ति वृत्रहन्।
न क्येवं यथा त्वम्।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अनन्तता का अन्त (न अनु) नहीं पाते और (रजसः सिन्धवः) अन्तरिक लोक भी जिसका अन्त (आनशुः) नहीं पा सकते (अस्य युध्यत) इसके युद्ध करने के समय (मदे) हर्ष में (स्ववृष्टि न) शास्त्रादिकों की अपनी वृष्टि जो होती है उसको भी कोई नहीं जानता। ऐसा (एकः) तू अकेला ही (अन्यत् विश्वं) अपने से भिन्न विश्व को (आनुषक् चकृषे) सम्पूर्ण रूप में करता है।

इस मन्त्र से पता चलता है कि परमात्मा त्रिलोक से भी अधिक है, अतः उसके अनन्त रूप को जानना सरल नहीं। उसकी अपनी विचित्रता के साथ शस्त्र-अस्त्रों की विचित्रता, शत्रुओं का नाश करना समझ नहीं आता। वह एक ही है। उसे किसी की सहायता की भी आवश्यकता नहीं। प्रभु के इस अनन्त और अद्भुत रूप का वर्णन करते हुए सन्त धरनीदास कहते हैं—

'धरनी' तन में तखत है, ता ऊपर सुलतान।
लेत मोजरा सब ही का, जहं लौ जीव जहान॥

अर्थात् इस तन के अन्दर ही तो बादशाही तख्त है जिसपर हमारा शाहों का शाह आसीन है। जगत् में जितने भी जीव हैं वहीं से बैठे-बैठे वह सबका मुजरा लिया करता है।

गरीबदास ने उसकी अनुपम महिमा का वर्णन करते हुए कहा—

साहिब तेरी साहिबी क्या कहूँ करतार।
पलक-पलक की दीठि में पूरन ब्रह्म हमार॥

मेरे पूर्ण ब्रह्म स्वामी! क्या कहूँ तेरी अनन्त महिमा को। धन्य! हर पल और हर नजर में तेरा दर्शन मिल रहा है।

लोग उस अनन्त भगवान् को खोजने के लिए दूर-दूर भटकते हैं। कोई मन्दिर, कोई मस्जिद और कोई गिरजाघर में उसे खोजता है। कोई जंगल में भटकता है तो कोई पहाड़ की चोटी पर और कोई गुफाओं में पाने के लिए दौड़ता है। गरीबदास कहते हैं—

सात सरग आसमान पर, भटकता है मन मूढ़।
खालिक तो खोया नहीं, इसी महल में ढूंढ॥

ओ भोंदू, कहाँ भटक रहा है तू स्वर्गों में और सातवें आसमान पर? खालिक की खोज में क्यों व्यर्थ हैरान हो रहा है? जरा उसे अपने दिल के महल में तो तलाश!

ऋग्वेद ६।२७।३ में बतलाया गया है कि परमात्मा की शक्ति, उसकी महिमा, उसका ऐश्वर्य आदि इतना अपार है कि किसी को भी उसका अन्त ज्ञात नहीं हो सकता। वेद का मन्त्र है—

नहि नु ते महिमनः समस्य न मघवन्मघत्त्वस्य विद्म।
न राधसो राधसो नूतनस्येन्द्र नकिर्ददृश इन्द्रियं ते॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चलतों में उसकी गति, स्थितों में उसकी स्थिति है। वही नेता होकर अग्नि का मार्ग-दर्शक है। वही रस होकर वरुण का रसवर्धक है। वही तेज होकर सूर्य का सविता (जनक), वही सर्ववित् उपदेशकों का उपदेष्टा। अग्नि को कौन कहता है ऊपर जा और जल को कौन सिखाता है निम्न स्थल की ओर बह ? इस सबका नियामक वही प्रभु है। संसार के सभी ऋषियों और महर्षियों ने उस परम ज्योति का गान किया है। आइए, हम भी उसको पुकारें, उसका गान करें—

यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैस्तवैः
वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैः गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा, पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः॥

अन्त में हम इस अनन्य अद्भुत प्रभु से प्रार्थना करते हैं, हे प्राणों के प्राण ! मेरे प्राणों को, मेरे जीवन को अपनी स्नेहसुधा से अनुप्राणित कर दो। मेरे प्राणों को अपनी संजीवनी से उज्जीवित कर दो। मेरी इन्द्रियाँ तुम्हारी अर्चना के फूल बन जाएँ। मेरे प्राण तुम्हारी पूजा के नैवेद्य हों। इससे मुझे नया जन्म, नई शक्ति, नई प्रेरणा प्राप्त हो।

ईश्वर अजन्मा और अनादि है

सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में ईश्वर के विषय में प्रश्नकर्त्ता ने अनेक प्रश्न पूछे हैं और ऋषि दयानन्द ने उनका उत्तर दिया है। उन्हीं प्रश्नों में एक प्रश्न यह भी है कि ईश्वर अवतार लेता है या नहीं ? स्वामीजी ने उत्तर दिया है "नहीं, क्योंकि **'अज' 'एकपात्'** (३४।५३) **'स पर्य्यगाच्छुक्रमकायम्'** (४०।८) ये यजुर्वेद के वचन हैं। इत्यादि वचनों से सिद्ध है कि परमेश्वर जन्म नहीं लेता।" प्रश्नकर्ता पूछता है—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

—भ० गी० (अ० ४, श्लोक ७)

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि जब-जब धर्म का लोप होता है, तब-तब मैं शरीर धारण करता हूँ। उत्तर देते हुए स्वामीजी कहते हैं। यह बात वेद-विरुद्ध होने से प्रमाण नहीं। और ऐसा हो सकता है कि श्रीकृष्ण चाहते हों कि मैं युग-युग में जन्म लेके श्रेष्ठों की रक्षा और दुष्टों का नाश करूँ तो कुछ दोष नहीं, क्योंकि **'परोपकाराय सतां विभूतयः'** परोपकार के लिए सत्पुरुषों का तन, मन, धन होता है। तथापि इससे श्रीकृष्ण ईश्वर नहीं हो सकते।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हे (वृत्रहन् इन्द्र) दुष्टनाशक और विज्ञानैश्वर्यसम्पन्न प्रभो ! (न कि) न तो कोई (त्वद् उत्तरम्) तुझसे श्रेष्ठ है और (न ज्यायः) न कोई बड़ा है। (न कि) न ही कोई (एवं) ऐसा है (यथा त्वम्) जैसा तू !

इस मन्त्र में प्रभु की श्रेष्ठता और सुन्दरता का कितनी स्पष्ट और सरल भाषा में वर्णन किया गया है।

'दादू दयाल' ने प्रभु की उपासना के लिए उपदेश देते हुए बताया है कि भला देखो तो मनुष्य की मूर्खता ! मन्दिरों में दुनिया-भर के देवताओं को पूजता-फिरता है और देवी माई की मनौती भी मनाता है, पर प्रत्यक्ष निरञ्जनदेव की सेवा-बन्दगी से बेखबर है—

पूजै देव दिहाड़िया, महामई मानै।
परमदेव निरंजना, ताकी सेव न जानै ।।

अथर्ववेद १०।७।३८ में कहा गया है—

महद्यक्षं भुवनस्य मध्ये तपसि क्रान्तं सलिलस्य पृष्ठे।
तस्मिञ्छ्रयन्ते य उ के च देवा वृक्षस्य स्कन्धः परित इव शाखाः ।।

ब्रह्म जो महत् (सबसे बड़ा) और सबका पूज्य है, जो सब लोगों के बीच में विराजमान और उपासना करने योग्य है, जो विज्ञानादि गुणों में सबसे बड़ा है, जो सलिल (आकाश) का आधार है और उसमें व्यापक तथा जगत् के प्रलय के पीछे भी नित्य निर्विकार रहता है। जिसके सहारे तैंतीस देव ठहरे हुए हैं। जैसे कि पृथिवी से प्रथम अंकुर निकलकर सब डालियों का आधार होता है उसी प्रकार जो प्रभु ब्रह्माण्ड का आधार है वही एक परमेश्वर है।

अन्तरिक्ष, द्यौ, चन्द्रमा और नक्षत्रादि आठ वसु हैं। प्राण, अपान, समान, व्यान, उदान, नाग कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनञ्जय और आत्मा ये ग्यारह रुद्र हैं। इन सबका आधार वही प्रभु हैं। वेद में कहा है—

एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः।
स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः ।।

—यजुर्वेद ३२।४

वह देव सारे कोणों को घेरे हुए विद्यमान है। वह आदि में था। वही सबके गर्भ में रहता है। वही प्रकट हुआ, वही प्रकट होता रहेगा। हे लोगो ! वह सर्वतोमुख होकर तुम्हारे सामने खड़ा है। सचमुच आँखें उठाकर देखिए, प्रकृति का यह जल कितना सौम्य है ! पं० चमूपति जी ने प्रभु के इस रूप का वर्णन करते हुए लिखा है "आजकल सकल संसार दिव्य है क्योंकि दिव्य दृष्टि से देखा गया है। वस्तु-वस्तु में परमदेव की झलक, अणु-अणु में ईश की चमक दीखती है। सूर्य ज्योति का पुंज है। यह सारा जगत् ब्रह्ममय है। व्यापक आकाश उससे व्याप्त है। दृढ़ पृथिवी उससे सुदृढ़ है। चमकते तारों की वही द्युति, वही सूर्य चन्द्र की ज्योति है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पादरहित होकर जलों को पार करनेवाली अर्थात् नौका आदि (**नः शम्**) हमारे लिए सुखकारक हों (**देवगोपाः पृश्निः नः शं भवतु**) सूर्यादि की रक्षा करनेवाला अन्तरिक्ष हमारे लिए सुखकारी हो।

यह तो विश्वसम्राट् प्रभु के लिए अजन्मा शव्द का प्रयोग हुआ। इसके अतिरिक्त वह समय और स्थान की दृष्टि से भी सादि नहीं अनादि है। अनादि शव्द का अर्थ है जिसका आदि कोई कारण वा समय न हो। ईश्वर अनादि भी है अजन्मा भी। ईश्वर का अनादित्व प्रकट करते हुए वेद कहता है—

अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि।
युधेदापित्वमिच्छसे॥

—सा० पू० ५।२।१

हे (**इन्द्र**) ऐश्वर्यसम्पन्न प्रभो! (**त्वं**) तू (**अभ्रातृव्यः**) शत्रुरहित है अथवा किसी का शत्रु नहीं है (**अनापिः**) किसी का वन्धु नहीं है या बन्धुरहित है (**अना**) तेरा कोई नेता नहीं है अथवा तेरा कोई नर=सेवक=नौकर नहीं है अर्थात् तू अपने कार्यों में किसी की सहायता की अपेक्षा नहीं रखता है (**जनुषा सनात् असि**) तू जन्म से सनातन है, अर्थात् तू जन्म आदि से रहित अनादि है (**युधा इत्**) उद्योग से ही तू (**आपित्वं इच्छसे**) वन्धुता को स्वीकार करता है।

वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद् भरन्तोऽवस्यवः।
वज्रिं चित्रं हवामहे॥

—सा० पू० ५।२।१०

हे (**अपूर्व्य**) अनादि परमात्मन् (**वज्रिन्**) पापवारक प्रभो! (**अवस्यवः वयम्**) रक्षा के अभिलाषी हम सब (**त्वाम् उ**) तुझ ही (**चित्रं**) अद्भुत (**स्थूरं**) अविनाशी की (**हवामहे**) कामना करते हैं (**न**) जिस प्रकार अन्य रक्षाभिलाषी लोग (**कच्चित् स्थूरं भरन्तः**) किसी महापुरुष का आश्रय करते हैं।

इन वेद-मन्त्रों में ईश्वर को अजन्मा और अनादि शव्दों से सम्वोधित किया गया है और वताया गया है यह अजन्मा ईश्वर इतना शक्तिशाली है कि सम्पूर्ण पृथिवी को धारण करता है, प्रीतिकारक प्राप्तव्य पदार्थों को देता है, यह आयु देता है, यह हमें वन्धनों से छुड़ाता है और संसार के विचित्र रहस्यों को हमें अपनी प्रेरणा द्वारा सिखलाता है। हम प्रार्थना करते हैं कि मेघ, समुद्र, नौका, भूमि और अन्तरिक्ष के साथ-साथ यह परमेश्वर भी हमारे लिए कल्याणकारी हो। वह परमेश्वर अनादि है, वह सर्वशक्तिशाली है, विना किसी दूसरे की सहायता के वह अपने सम्पूर्ण कार्यों को करता है।

ईश्वर की हम लोग इसीलिए तो उपासना करते हैं कि वह सर्वशक्तिशाली और सर्वनियन्ता है। वह सर्वशक्तिशाली और सर्वनियन्ता तभी हो सकता है जब वह अजन्मा और अनादि हो। जिसका जन्म होगा उसकी मृत्यु भी होगी, जिसका

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रश्नकर्ता ने पूछा कि यदि परमेश्वर जन्म नहीं लेता है तो कंस, रावणादि दुष्टों का वध कौन करेगा ? स्वामीजी महाराज ने जो उत्तर दिया है, उसका भाव यह है कि जो जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करने का सामर्थ्य रखता है और उनकी उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय करता है उसके सामने कंस, रावणादि एक कीड़ी के समान भी नहीं। वह परमेश्वर तो अनन्त गुण-कर्म और स्वभावयुक्त है। क्या जो जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करता है उसके लिए कंस और रावण को मारना तथा गोवर्धन पर्वत उठाना वड़े कार्य हैं ? इसके अतिरिक्त यदि कोई कहे कि अनन्त आकाश गर्भ में आया या मुट्ठी में भर लिया तो यह कहना सच नहीं हो सकता, क्योंकि आकाश अनन्त और सबमें व्यापक है। इससे न आकाश अन्दर आता है और न बाहर जाता है वैसे ही परमात्मा के अनन्त, सर्व-व्यापक होने से उसका आना-जाना कभी सिद्ध नहीं हो सकता। आना-जाना वहाँ हो सकता है, जहाँ न हो। क्या परमेश्वर गर्भ में व्यापक न था जो कहीं से आया ? और बाहर नहीं था जो भीतर से निकला ? ऐसा ईश्वर के विषय में कहना और मानना उचित नहीं। इसलिए परमेश्वर का जाना-आना, जन्म-मरण कभी सिद्ध नहीं हो सकता, इसलिए 'ईसा' आदि भी ईश्वर के अवतार नहीं ऐसा समझना चाहिए। राग, द्वेष, क्षुधा, तृषा, भय, शोक, दुःख-सुख, जन्म-मरण आदि गुण युक्त होने से मनुष्य थे। वेद ने कहा है—

अजो न क्षां दाधार पृथिवीं तस्तम्भ द्यां मन्त्रेभिः सत्यैः।
प्रिया पदानि पश्वो निपाहि विश्वायुरग्ने गुहा गुहं गाः ॥

—ऋ० १।६७।३

(न) जैसे (अजः) न जन्मनेवाला परमेश्वर (सत्यैः मन्त्रैः) न टूटनेवाले विचारों से (क्षां दाधार) पृथिवी को धारण करता है, (पृथिवीं द्यां तस्तम्भ) विस्तृत अन्तरिक्ष तथा द्युलोक अथवा सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों को (तस्तम्भ) गिरने से रोकता है (प्रिया पदानि) प्रीतिकारक प्राप्तव्य पदार्थों को देता है (विश्वायुः) सम्पूर्ण आयु देनेवाला (पश्वः) बन्धन से (निपाहि) सर्वथा छुड़ाता है (गुहा) बुद्धि में स्थित हुआ वह (गुहं) गुह्य पदार्थ को (गाः) जानता है, वैसे ही तू भी हे (अग्ने) विद्वान् जीव ! हमें अज्ञानादि से छुड़ाकर प्राप्तव्य की प्राप्ति करा।

एक अन्य मन्त्र में परमेश्वर को अजन्मा वतलाते हुए कहा गया है—

शन्नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शन्नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा ॥

—ऋ० ७।३५।१३

अर्थात् (एकपात्) एकपात् (अजः) अजन्मा परमेश्वर (नः) हमारे लिए (शं) कल्याणकारी (अस्तु) हो (बुध्न्यः अहिः नः शम्) अन्तरिक्ष में होनेवाले मेघ हमारे लिए कल्याणकारी हों। (समुद्रः शं) समुद्र सुखदायी हो (नपात् अपां पेरुः)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और उत्साह का संचार करने के लिए करते हैं ? यदि नहीं करते तो आप न तो परमात्मा से सम्बन्ध जोड़ सकते हैं और न ऊपर के मन्त्रों में अनादि परमात्मा से जिन वस्तुओं की कामना की है, वे ही प्राप्त कर सकते हैं। प्रभु से सम्बन्ध जोड़िए, आपका भविष्य चमक उठेगा। जब ईश्वर से सम्बन्ध जुड़ जाएगा तो संसार में चमकता भविष्य दिखाई देने लगेगा। बहुत-से मनुष्य रोया करते हैं कि क्या करें, हमारे ग्रह अच्छे नहीं, पर वे यह नहीं जानते कि हमारी सफलता हमसे प्रकट होती है न कि ग्रहों से ! संसार में जो अपने को प्रभु से दूर कर लेता है, वही असफल होता है। वही आदमी अपने को क्षुद्र और हीन मानता है जिसे अनादि प्रभु का सम्बल नहीं—सहारा नहीं।

हम इस अजन्मा और अनादि प्रभु से जितना तन्मय रहेंगे उतना ही जीवन और स्वास्थ्य का प्रवाह हमें प्राप्त होगा और हमारी आधि-व्याधि शान्ति को प्राप्त हो जाएगी। यही अर्थात् ईश्वर के साथ बुद्धिपूर्वक सम्बन्ध जोड़ना ही सब प्रकार की चिकित्सा का, सुख-समृद्धि का रहस्य है। ऐसा कोई स्थायी संयोग नहीं, ऐसा कोई स्थायी स्वास्थ्य नहीं, ऐसा कोई स्थायी सुख नहीं जो इस जीवन के बाहर हो। यदि हम ज्ञानपूर्वक अनादि-अनन्त प्रभु के जीवन के प्रवाह में अपने शारीरिक और मानसिक दिव्य सुख को ठीक तरह स्थिर रख सकें तो यही मनुष्य के कल्याण का परम रहस्य है। पूर्वोक्त मन्त्रों का यही भाव है। याद रखो मनुष्य ईश्वर के गुणों को धारण कर स्वयं ईश्वरीय सत्ता से अपना सम्बन्ध जोड़ लेता है और वह निर्भय, सुखी और मस्त हो जाता है। इसलिए हमें प्रभु के अनादि और अजन्मा रूप की उपासना करने का प्रयत्न करना चाहिए।

ईश्वर न्यायकारी और दयालु है

सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में स्वामी दयानन्द जी महाराज ने 'परमेश्वर दयालु और न्यायकारी है या नहीं ?' इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा है—'है।' प्रश्नकर्ता ने पुनः पूछा कि 'ये दोनों गुण परस्पर-विरुद्ध हैं। जो न्याय करे तो दया, और दया करे तो न्याय छूट जाए, क्योंकि न्याय उसको कहते हैं कि जो कर्मों के अनुसार न अधिक न न्यून सुख-दुःख पहुँचाना और दया उसको कहते हैं जो अपराधी को बिना दण्ड दिये छोड़ देना।' स्वामीजी ने कहा—"न्याय और दया का नाममात्र ही भेद है, क्योंकि जो न्याय से प्रयोजन सिद्ध होता है वही दया से। दण्ड देने का प्रयोजन है कि मनुष्य अपराध करने से बन्द होकर दुःखों को प्राप्त न हो। वही दया कहाती है जो पराये के दुःखों को छुड़ाना और जैसा अर्थ दया और न्याय का तुमने किया वह ठीक नहीं, क्योंकि जिसने जैसा जितना बुरा कर्म किया

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आदि होगा उसका अन्त भी होगा। यदि हम प्रभु को मरणधर्मा मान लेंगे तो उसके मरने के बाद हमारी कौन सहायता करेगा, कौन हमें हमारे कर्मों के अनुसार फल देगा ? इसी प्रकार यदि परमेश्वर का जन्म होता हो तो उसके जन्म से पहले हमारा कौन रक्षक रहा होगा ? इसलिए ईश्वर का न तो जन्म होता है और न मरण होता है। वह अनादि और अजन्मा प्रभु हमारे जन्म से पहले रहेगा, हमारी सृष्टि से पहले था और वह उसके बाद भी रहेगा अर्थात् उसका और हमारा सम्बन्ध कभी टूटनेवाला नहीं है। पर कभी-कभी मनुष्य अपने पास रहनेवाले व्यक्ति को भी अपने मन से दूर हटा देता है जब वह दूर हटा देता है; तब पास रहते हुए भी वह दूर हो जाता है। अनादि और अजन्मा से जब हम सुख की कामना करते हैं उसका मतलब यह है कि हम प्रभु से अपना अटूट सम्बन्ध स्थापित करते हैं। जब हमारा उस प्रभु के साथ इतना गहरा सम्बन्ध स्थापित हो जाता है कि वह हमें चारों ओर और सब कालों में दिखाई देने लगता है तो हमारी कमजोरी, संकीर्णता, भीरुता, सन्देह अपने-आप हमसे विदा हो जाते हैं और हमें पूर्ण निर्भयता और शक्ति प्राप्त होती है, जिसका उद्गम परमात्मा से है।

यह ध्यान रखने की बात है कि परमात्मा से हम जितना अपना सम्बन्ध स्थापित करेंगे, जितनी उसकी उपासना करेंगे उतना ही हम अपनी आत्मा में जीवन, सत्य और सौन्दर्य के तत्त्वों का विकास करेंगे, उतना ही हमारी आत्मा में, हमारे जीवन में नई शक्ति, नये साहस, नये बल का संचार होगा और जीवन में अद्भुत पुष्प विकसित हो जाएँगे। मनुष्य की उन्नति उतनी ही अधिक होगी जितना वह परमात्मा के सत्य, त्याग, दया, प्रेम और शक्ति का अपने में स्थापन करेगा। वह मनुष्य कभी महान् न हो सकेगा जो ईश्वरीय शक्ति से अपने को विमुख रखेगा।

ईश्वर से सम्बन्ध-स्थापन का तात्पर्य यह है कि ईश्वर के प्रति आप अपने कर्त्तव्यों को पूरा कीजिए। आप मुझसे पूछेंगे कि ईश्वर के प्रति मनुष्य के क्या कर्त्तव्य हैं और हम उन्हें कैसे पूरा कर सकते हैं ? तो सुनिए, ईश्वर के प्रति कर्त्तव्य पूरा करने का मतलब है कि जीवन का उपयोग बुद्धिमत्तापूर्वक करें, उसे बुद्धिमत्ता पूर्वक चलाएँ। ईश्वर ने प्रत्येक व्यक्ति को बुद्धि दी है पर दुर्भाग्यवश हम उस प्राप्त बुद्धि का उपयोग नहीं कर पाते हैं ? सोचिए तो सही कि क्या आप अपने खानपान में बुद्धि का उपयोग करते हैं ? यदि आप मद्य, मांस, मछली, अण्डे या इसी तरह की दूषित वस्तुओं का उपयोग करते हैं, अधिक खाते हैं या असमय में खाते हैं तो कहाँ आपने बुद्धि का उपयोग किया और कैसे आपको स्वास्थ्य प्राप्त होगा ? इसी प्रकार क्या आप अपने धन का खर्च बुद्धिमत्तापूर्वक करते हैं ? क्या आप अपनी विद्वत्ता, भाषणशक्ति, शारीरिकशक्ति का प्रयोग लोगों में आशा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रहा है और उसे क्या दण्ड देना चाहिए। वह अपनी सर्वज्ञता से सबके अपराधों को जानकर उसके अनुकूल न्याय करता और भले-बुरे कर्मों का फल देता है। वेद के एक मन्त्र में इस बात को स्पष्ट करते हुए बतलाया गया है—

वि जानीह्यार्यान्ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान्।
शाकी भव यजमानस्य चोदिता विश्वेत्ता ते सधमादेषु चाकन।।

—ऋ० १।५१।८

हे प्रभो! **(आर्यान् विजानीहि, च ये दस्यवः)** तू आर्यों=श्रेष्ठ कार्य करनेवाले मनुष्यों को जानता है और जो दस्यु=दुष्ट कार्य करनेवाले लोग हैं उनको जानता है, अतएव तू **(बर्हिष्मते)** पूजादि सत्यकर्म करनेवाले को **(रन्धय)** सिद्धियुक्त करता है, और **(अव्रतान् शासत्)** अव्रतों=पापियों को दण्ड के द्वारा शिक्षा देता है, **(शाकी भव)** तू ही शक्तिशाली है और **(यजमानस्य चोदिता)** यज्ञादि कर्म करनेवाले को सत्कर्म में प्रेरित करता है **(ते सधमादेषु ता विश्वा इत् चाकन)** तेरे सदृश आनन्दभोग के निमित्त मैं उन सभी सुकर्मों को चाहता हूँ।

सर्वज्ञ और सर्वद्रष्टा होने से परमेश्वर सबके गुण और दोषों को जानता है और वह उनके अनुसार मनुष्य को दण्ड देता है तथा उसे सुखी करता है। इसी बात को स्पष्ट करते हुए निम्न मन्त्र में कहा गया है—

यदंग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि।
तवेत्तत्सत्यमंगिरः ।।

—ऋ० १।१।६

हे **(अंगिरः)** प्राणों-के-प्राण **(अंग)** परम प्यारे **(अग्ने)** सर्वज्ञ प्रभो! **(यत्)** जो **(त्वं)** तू **(दाशुषे)** दानशील के प्रति, फलस्वरूप **(भद्रं)** भलाई, कल्याण **(करिष्यसि)** करता है। **(तत्)** वह **(तव)** तेरा **(सत्यं इत्)** अटल नियम है।

अर्थात् परमेश्वर का यह अटल नियम है कि जो मनुष्य जैसा करेगा, उसे वैसा फल मिलकर रहेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि अनेक सम्प्रदायों और मतों में पापों को परमेश्वर क्षमा कर देता है, यह मानकर अनेक आडम्बरों का विधान किया गया है। पौराणिकों की इस विषय में मान्यता है कि चाहे आप जीवन-भर लूट-खसोट, व्यभिचार, चोरी, कालाबाजारी और घूस लेते रहिए, निर्धनों, निर्बलों और गरीबों को सताते रहिए, मरते समय या किसी निश्चित दिन गंगाजी में डुबकी लगा लीजिए या गंगाजल पी लीजिए, तो पापों से छुटकारा हो जाएगा। मुसलमानों में 'हज्जयात्रा' और वहाँ जाकर 'संगे अस्वद' नामक पत्थर को चूमने से पापों के क्षमा हो जाने की मान्यता है। ईसाई मत का पोप तो रोम में पापों को क्षमा करने के लिए पत्रक ही देता था, और ईसा मसीह में यह भी शक्ति मानी गई है कि वे नाम लेने मात्र से पापों को क्षमा कर देंगे। परन्तु वैदिक धर्म की मान्यता इनसे भिन्न है। हमारा सिद्धान्त यह है कि पाप क्षमा नहीं किये जाते।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हो उसको उतना वैसा ही दण्ड देना चाहिए। उसी का नाम न्याय है, और जो अपराधी को दण्ड न दिया जाए तो दया का नाश हो जाए, क्योंकि एक अपराधी डाकू को छोड़ देने से सहस्रों धर्मात्मा पुरुषों को दुःख देना है। जब एक के छोड़ने से सहस्रों मनुष्यों को दुःख प्राप्त होता है तो वह दया किस प्रकार हो सकती है? दया वही है कि उस डाकू को कारागार में रखकर पाप करने से बचाना डाकू पर, और उस डाकू को मार देने से अन्य सहस्रों पर दया प्रकाशित होती है।"

प्रश्नकर्ता ने पुनः प्रश्न किया 'फिर दया और न्याय दो शब्द क्यों हुए? उन दोनों शब्दों का अर्थ एक ही है तो दो शब्दों का होना व्यर्थ है, इसलिए एक शब्द का रहना तो अच्छा था। इससे पता लगता है कि ये दोनों एक चीज नहीं।' स्वामीजी उसी से पूछते हैं कि 'क्या एक नाम के अनेक अर्थ और एक अर्थ के अनेक नाम नहीं होते? जब एक नाम के अनेक अर्थ और अनेक अर्थों का एक नाम होता है तो शंका करने की कोई आवश्यकता नहीं। देखो, ईश्वर की पूर्ण दया तो यह है कि जिसने सब जीवों के प्रयोजन सिद्ध होने के अर्थ जगत् में सकल पदार्थ उत्पन्न करके दान दे रखे हैं। इससे भिन्न जगत् में दूसरी बड़ी दया कौन-सी है? अब न्याय का फल प्रत्यक्ष दीखता है कि सुख-दुःख की व्यवस्था अधिक और न्यूनता से फल को प्रकाशित कर रही है। इन दोनों का इतना ही भेद है कि जो मन में सबको सुख होने और दुःख छूटने की इच्छा और क्रिया करना है वह दया और बाह्य चेष्टा अर्थात् बन्धन-छेदनादि यथावत् दण्ड देना न्याय कहाता है। दोनों का एक प्रयोजन यह है कि सबको पाप और दुःखों से पृथक् कर देना।'

स्वामीजी महाराज ने न्याय और दया का विश्लेषण करने के बाद अत्यन्त सुन्दर रूप में उसका प्रयोजन बतलाया है। वेद भी ईश्वर को न्यायकारी और दयालु मानता है और कहता है—

वधैर्दुःशंसाँ अप दूढ्यो जहि दूरे वा ये अन्ति वा के चिदत्रिणः।
अथा यज्ञाय गृणते सुगं कृध्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव॥

—ऋ० १।९४।९

हे (अग्ने) तेजस्वी प्रभो! (वधैः) वध के साधनभूत शस्त्रों में (दुःशंसान्) दुष्ट (दूढ्यः) दुर्बुद्धिवालों को (अपजहि) ताड़नाओं के द्वारा मार अर्थात् सन्मार्ग दिखा। (दूरे) जो दूर हैं (वा ये) या जो (अन्ति वा) पास हैं तथा (केचित्) जो कोई (अत्रिणः) सर्वभक्षण करनेवाले अर्थात् स्वार्थी हैं उनका हनन कर। (अथा) और (यज्ञाय) यज्ञ करनेवाले (गृणते) स्तोता को (सुगं कृधि) सुखी कर। हे प्रभो! (तव) तेरी (सख्ये) मित्रता में (वयं मा रिषाम) हम नष्ट न हों।

परमेश्वर दुष्टों को उनके दुष्ट कर्मों का दण्ड देता है और सज्जनों को सुख देता है। दुष्टों को दण्ड देकर उन्हें सुमार्ग पर लाना उसका उद्देश्य है।

परमात्मा सर्वशक्तिमान् है। इसलिए वह जानता है कि कौन क्या कर्म कर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रबन्ध किया हो, जिसका दिल मुसीबतज़दा या आफत के मारों को देखकर उनकी सहायता के लिए दौड़ पड़ता हो, जिसने किसी जाति के कल्याण के लिए अपने को बलिदान कर दिया हो—वही महान् है, और वही प्रभु का सच्चा उपासक है। न्यायकारी प्रभु का उपासक सत्य का उपासक बन जाता है। उसके चरित्र की यह विशेषता हो जाती है कि वह पर्वत के समान दृढ़ रहता है। चारों ओर तूफान उठते हैं, झंझा चलता है, पत्थर बरसते हैं, पर उनका एक रोम भी विचलित नहीं होता। तुर्कों ने कोशूर को इस्लाम कुबूल करने की शर्त पर आश्रय देने की बात कही। तब उस बहादुर ने कहा, 'मृत्यु और लज्जा, इनमें से किसी एक को स्वीकार करने की दुविधा में मैं कभी नहीं पड़ा। एक दिन मैं एक विशाल राष्ट्र का मालिक था, आज अपने पुत्रों के लिए मेरे पास कुछ नहीं। ईश्वर की इच्छा पूरी होने दो, मैं मौत के स्वागत को तैयार हूँ। मेरे ये हाथ खाली हैं, पर इनपर कोई कालिमा नहीं लगी।'

परमेश्वर के इन गुणों का ध्यान हममें सच्चरित्रता उत्पन्न करेगा। हमारा प्रभाव बढ़ेगा और हम मानवता की सेवा करेंगे। इमर्सन ने कहा है—"मनुष्य का चरित्र स्वयं बोलता है। चोरी से कोई धनी नहीं होता, दान से कभी कोई गरीब नहीं होता। थोड़ा-सा भी अन्याय या झूठ जल्दी ही स्पष्ट हो जाता है। यदि तुम सच बोलोगे और न्याय का व्यवहार करोगे तो सारी प्रकृति और सब प्राणी तुम्हारी मदद करेंगे।"

अतः हमें परमेश्वर के न्यायकारी और दयालु रूप का ध्यान और धारणा करनी चाहिए। याद रखिए, इससे आप जीवन में प्रसन्न हो सकेंगे और शत्रुता, बुरा बर्ताव, जलन, घबराहट, मार बैठना, घृणा, कठोरता, परेशानी, उद्वेग आदि दूर होंगे। हम अपनी इच्छा से ईश्वर के आदेशों से अधिक प्रेम करने लगेंगे, उनका पालन करने लगेंगे और उस समय सत्य हमारे सामने होगा। किसी को असत्य मार्ग पर चलकर कष्ट न देना हमारा लक्ष्य हो जाएगा। भवत कहता है—

छोड़ नटनागर तुम्हें, जाऊँ कहाँ ?
तुम-सा वरदाता, भला पाऊँ कहाँ ?

कीर्ति दो, धन दो प्रभो ! बल दो मुझे,
पूर्ण हो सब कामना, फल दो मुझे।

गा रही सब वाणियाँ तुमको यहाँ,
भेंट मैं अन्यत्र पहुँचाऊँ कहाँ ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"**अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्**" अर्थात् शुभ या अशुभ किये हुए कर्मों का फल अवश्य भोगना ही पड़ता है। यही तो परमेश्वर का न्याय है। पापों का फल न मिलने की भावना का ही तो फल है कि सब सोचते हैं कि यदि गंगास्नान, हज्जयात्रा या ईसा में विश्वास लाने से दण्ड से मुक्ति हो सकती है, तो क्यों संयम किया जाए ? क्यों तप किया जाए ? क्यों कष्ट उठाया जाए ? यह ध्यान रखना चाहिए कि मनुष्य दुष्ट और मन्द स्तुतियों से सुख, ऐश्वर्य, आनन्द या धन नहीं प्राप्त करता, हिंसक मनुष्यों को भी लक्ष्मी नहीं प्राप्त होती। इस संसार में सुकर्मा मनुष्य ही धन प्राप्त करता है। इसलिए हमें ईश्वर के इन गुणों का ध्यान रखना चाहिए, और स्वयं न्यायकारी और दयालु बनने का प्रयत्न करना चाहिए। प्रभु तो न्याय करते हुए अपराधियों के प्रति भी दया करता है। वेद कहता है—

यो मृळयाति चक्रुषे चिदागो वयं स्याम वरुणे अनागाः।
अनुव्रतान्यदितेर्ऋधन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

—ऋ० ७।८७।७

(यः) जो प्रभु **(आगः)** अपराध **(चक्रुषे चित्)** करनेवाले के प्रति भी **(मृळयाति)** दया बनाये रखता है, **(वरुणे)** उस सर्वपूज्य परमात्मा के निकट **(वयं)** हम सब **(अनागाः स्याम)** अनपराधी होवें, सदैव उसके समीप अपराधरहित होकर रहें। **(अदितेः)** उस अखण्ड, सर्वव्यापी देव के **(व्रतानि अनु)** विविध सत्यादि व्रतों के अनुकूल **(ऋधन्तः)** आचरण करें। हे विद्वानादि समस्त सत्यदेवो ! **(यूयम्)** आप सब **(नः)** हम उपासकों को **(स्वस्तिभिः)** कल्याणों से अर्थात् विविध मंगल और आशीर्वाद देकर **(पात)** रक्षा करें।

एक अन्य मन्त्र देखिए—

यन्नूनमश्यां गतिं मित्रस्य यायां पथा।
अस्य प्रियस्य शर्मण्यहिंसानस्य सश्चिरे ॥

—ऋ० ५।६४।३

यदि **(गतिमश्याम्)** सद्गति प्राप्त करना चाहूँ तो **(मित्रस्य)** स्नेहमय=दयालु प्रभु के **(पथा)** बताये मार्ग से **(यायां)** जाऊँ, क्योंकि **(अस्य अहिंसानस्य प्रियस्य)** इस हिंसा न करनेवाले अर्थात् दयाभावयुक्त परमप्रिय परमेश्वर के **(शर्मणि)** कल्याण-मय मार्ग में, विद्वान् **(सश्चिरे)** आश्रय पाते हैं। यह परमेश्वर दण्ड देता है, पर हिंसाभाव से नहीं, अपितु कल्याण की भावना से। कल्याण चाहनेवाले को स्वयं भी दूसरों का कल्याण करना चाहिए। अंग्रेजी साहित्य के एक लेखक वाल्टेयर ने बताया है, जिसने मानवसमाज का कुछ भला किया हो, वही महान् है, जिसके द्वारा किसी दुःखी का दुःख कुछ घटा हो, जिसने अपनी भुजाओं को अनाथों और अबलाओं के उद्धार में लगाया हो, जिसने नये अनुसन्धान करके मानवजाति के प्राण बचाये हों, जिसने सबको अपना भाई समझकर उनके आराम और सुख का

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पूर्व से ही विद्यमान रहता है। वेद ने भी इसका प्रतिपादन किया है और कहा है—

भोग्यो भवदथो अन्नमदद् बहु।
यो देवमुत्तरावन्तमुपासातै सनातनम्॥

—अ, १०।८।२२

(**यः उत्तरावन्तं सनातनं देवं उपासातै**) जो अनेक उत्तमगुण युक्त सनातन ब्रह्म की उपासना करता है, वह (**भोग्यः भवत्**) सांसारिक भोगों को भोगता है और परमात्मा की दया से (**बहु अन्नं अदत्**) बहुत अन्न प्राप्त करता है। इससे अगले मन्त्र में बतलाया गया है—

सनातनमेनमाहुरुताद्य स्यात् पुनर्णवः।
अहोरात्रे प्र जायेते अन्यो अन्यस्य रूपयोः॥

—अ० १०।८।२३

विद्वान लोग (**एनं सनातनं आहुः**) इस परमात्मा को सनातन या नित्य कहते हैं, (**पुनः अद्य नवः उत स्यात्**) किन्तु वर्तमान में वह नया भी रहता है, अर्थात् सनातन होता हुआ भी सदा युवा है। (**अहोरात्रे अन्यो अन्यस्य रूपयोः प्रजायेते**) दिन और रात, सृष्टि और प्रलय एक-दूसरे की अपेक्षा से होते रहते हैं।

इस पुरातन, नित्य, सनातन प्रभु की उपासना का उपदेश देते हुए वेदमन्त्र कहता है—

अस्मा इदु प्रय इव प्र यंसि भराम्याङ्गूषं बाधे सुवृक्ति।
इन्द्राय हृदा मनसा मनीषा प्रत्नाय पत्ये धियो मर्जयन्त॥

—ऋ० १।६१।२

(**अस्मै इत् उ**) इसी (**इन्द्राय**) प्रभु के लिए (**बाधे**) शत्रु को हटाने के लिए (**सुवृक्ति आंगूषं**) उत्तम भाषणयुक्त स्तवन (**प्रयंसि**) करता हूँ और (**प्रय इव**) अन्न के समान (**प्रभरामि**) उसको हृदय में धारण करता हूँ। सब उपासक (**धियः मर्जयन्तः**) अपनी बुद्धियों को शुद्ध करते हुए (**हृदा**) हृदय (**मनसा**) मन और (**मनीषा**) बुद्धि से (**प्रत्नाय पत्ये**) पुरातन=नित्य=सनातन स्वामी प्रभु के लिए अपने शब्द अर्पण करते हैं।

मनुष्य की प्रार्थना तब सुनी जाती है जब वह शुद्धभाव और पवित्र मनोवृत्ति से की जाती है। वह परमेश्वर स्वयं पवित्र है और पवित्रता, सत्यता को पसन्द करता है, इसीलिए ऋग्वेद ८।९५।७ में कहा गया है कि सब लोग आओ, हम सब शुद्ध साम से (**शुद्धं इन्द्रं नु स्तवाम**) पवित्र परमात्मा की स्तुति करें और शुद्ध वचनों से अथवा ऋचाओं के द्वारा दोषरहित भगवान् की स्तुति करें। वह पवित्र तथा आश्रयदाता सबको सुख देता है। मन्त्र है—

एतो न्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना।
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्ध आशीर्वान्ममत्तु॥

—ऋ० ८।९५।७

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ईश अन्तर्यामी, नित्य और पवित्र है

न तं विदाथ य इमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव।
नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थशासश्चरन्ति ॥

—ऋ० १०।८२।७

(**तं न विदाथ**) तुम उसको नहीं जानते, (**य इमा जजान**) जो इन सबको उत्पन्न करता है। (**युष्माकं अन्तरं अन्यत् बभूव**) तुम्हारा अन्तर्यामी तुमसे भिन्न है। किन्तु मनुष्य (**नीहारेण प्रावृताः जल्प्याः**) अज्ञान से ढके हुए होने के कारण वृथा जल्प करते हैं (**च**) और (**उक्थशासः असुतृपः चरन्ति**) वातूनी = वकवादी [अपने आपको ब्रह्म माननेवाले] प्राणमात्र की तृप्ति में लगे रहते हैं।

मनुष्य के मन-मन्दिर में भगवान् विराजमान रहते हैं परन्तु अपने अज्ञान के कारण अपने अन्दर विद्यमान भगवान् को वह नहीं जान पाता। वह कभी-कभी अपने को ही ब्रह्म मान लेता है और कभी अपने अन्दर विद्यमान ब्रह्म को न जानकर उसे मन्दिरों, मस्जिदों, गिरिजाघरों, जंगलों या पहाड़ों की गुहा में खोजने निकल पड़ता है, परन्तु वह भगवान् उसे वहाँ नहीं मिलता।

यजुर्वेद के ३१।१६ मन्त्र में बतलाया गया है कि परमात्मा सब पदार्थों का अन्तर्यामी है, परन्तु इससे यह भ्रम होने की सम्भावना भी हो सकती है कि जब वह पदार्थ उत्पन्न होता होगा उस समय ही वह प्रभु भी उस पदार्थ के साथ उत्पन्न होगा, अतः इस मन्त्र में यह भी बतला दिया गया है कि वह परमेश्वर **अजायमानः** = उत्पन्न न होनेवाला = अजन्मा है, वह जड़ और चेतन सबके भीतर रहता है। मन्त्र है—

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते।
तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा ॥

—यजुर्वेद ३१।१६

(**प्रजापतिः अजायमानः गर्भे अन्तः चरति**) सम्पूर्ण का स्वामी प्रभु अजन्मा है और सब चेतन और जड़ पदार्थों के अन्दर विद्यमान है। (**बहुधा विजायते**) नाना प्रकार का जगत् उसी के सामर्थ्य से उत्पन्न होता है। (**धीराः तस्य योनिं परि पश्यन्ति**) धीर जन उसकी प्राप्ति के साधनों का भली प्रकार विचार करते हैं अथवा बुद्धिमान् लोग इस जगत् का कारण उसी ब्रह्म को जानते हैं (**तस्मिन् ह विश्वा भुवनानि तस्थुः**) उसी में सारे लोक-लोकान्तर रहते हैं।

इस अन्तर्यामी परमात्मा को विद्वानों ने सनातन या नित्य माना है। नित्य होने के कारण वह उत्पन्न होनेवाली वस्तु में प्रारम्भ से ही—यहाँ तक कि उससे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

युवती ने सब सुना और बोली "अरे बादशाह! तुम क्या नमाज पढ़ रहे थे? नमाज का मतलब है अपने प्रियतम की खोज। मैं भी अपने प्रियतम की खोज में जा रही थी। मुझे जाएनमाज नहीं दीखा। मुझे तो केवल मेरा प्रियतम ही सूझ रहा था। तुम्हें मैं कैसे दिखाई पड़ गई?"

नर राची सूझ्यो नहीं,
तुम कस लख्यो सुजान।
कुरान पढ़त बौरे भयो,
नहि राच्यो रहमान॥

अर्थात् 'मैं तो अपने पतिदेव की खोज में बेसुध हो गई थी जिससे मुझे कुछ सूझा नहीं, परन्तु तुम तो प्रभुभजन में लीन थे, तुमने कैसे देख लिया? मालूम पड़ता है कि कुरान ही पढ़कर बौखला गये हो? भगवान में अभी प्रीति नहीं हुई।' अकबर यह उत्तर सुनकर अवाक् रह गया।

वास्तव में हम उस भगवान् को अपना हृदय पवित्र बनाये बिना प्राप्त करना चांहते हैं, अतः हमें उसका शुद्ध रूप दिखाई नहीं देता। हमारे अन्दर विद्यमान रहते हुए भी हम उसे अपने अन्दर न खोजकर बाहर खोजने जाते हैं। हमें वह भगवान् मिलता नहीं, हम भटकते रह जाते हैं।

मुझे एक घटना याद आ रही है। एक बार एक जेबकतरा बम्बई में एक सेठ के पास आकर रेल में बैठ गया। उसने सेठ से परिचय किया, आत्मीयता बताई और उसके प्रति अपना आदर भाव दिखलाने लगा। सेठ भी समझ गया कि यह कोई उचक्का है। दोनों सावधानी से अपनी चालें चलते हुए कलकत्ता पहुँचे, और जेबकतरे के आग्रह पर दोनों एक ही होटल में ठहरे। सेठ के पास एक हीरा था। वह उसे बेचने के लिए आया था और जेबकतरे को उसके हीरे का पता था, अतः वह उसे हथियाना चाहता था। सेठ का हीरा दो-तीन दिन तक बिका नहीं, अतः वह रोज रात को आकर होटल में रहता और जेब काटनेवाला भी बहाने से वहीं रहने लगा। दोनों रात को अपनी-अपनी फिराक में रहते—एक हीरा बचाने की और दूसरा उसे हथियाने की। एक दिन सेठ ने शाम को आकर कहा "मेरा काम हो गया। आज मैं जा रहा हूँ।" जेबकतरे ने उसके सामने हाथ जोड़े और बोला "शायद आप जानते न होंगे मैं एक प्रसिद्ध जेबकतरा हूँ। बड़े-बड़ों की मैंने जेबें साफ कर दी हैं, परन्तु आपसे मैं हार गया। गाड़ी में आपका हीरा न ले सका, जब रात को आप सो जाते थे तब मैं आपकी प्रत्येक वस्तु की, जेब की और बक्से की खोज कर लेता था, मुझे वह हीरा कहीं मिला नहीं यद्यपि मैं जानता था कि वह आपके ही पास है। आप कहाँ रखते थे? मुझे बताइए।" सेठ जी हँसे और बोले "अरे भाई, जब तुम मेरे पास बैठे तभी मैं समझ गया था कि तुम मेरी तलाशी लोगे। इसलिए शुरू में जब तुम सो जाते थे, तब मैं इसे सफाई से तुम्हारे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अगले मन्त्र में कहा गया है—

इन्द्र शुद्धो न आगहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः ।
शुद्धो रयिं नि धारय शुद्धो ममद्धि सोम्यः ।।

—ऋ० ८।९५।८

अखण्ड ऐश्वर्यसम्पन्न प्रभो ! पवित्र रक्षाओं के द्वारा शोधक और स्वयं पवित्र तू हमें सब प्रकार से प्राप्त हो । तू शुद्ध धन देता है और पवित्र तथा सौम्य तू हम सबको आनन्दित करता है ।

एष सूर्यमरोचयत् पवमानो विचर्षणिः ।
विश्वा धामानि विश्ववित् ।। —ऋ० ९।२८।५

अर्थात् यह सर्वज्ञ पवित्र प्रभु सूर्य को प्रकाशित करता है, और वही सर्वव्यापक, सबसे विचार करने योग्य प्रभु सम्पूर्ण तेजस्वी पदार्थों को प्रकाशयुक्त करता है ।

एक अन्य मन्त्र में कहा गया है—

विश्वो यस्य व्रते जनो दाधार धर्मणस्पतेः ।
पुनानस्य प्रभूवसोः ।।

—ऋ० ९।३५।६

अर्थात् जिस प्रभूत ऐश्वर्य-सम्पन्न (**पुनानस्य**) पवित्र (**धर्मणः पतेः**) नियमपालक प्रभु के (**व्रते**) नियम में या व्रत में (**विश्वः जनः**) सारा संसार (**दाधार**) अपनी सत्ता धारण कर रहा है, उस पवित्र परमात्मा की भक्ति से अपने मन, वाक्, काम को पवित्र करना चाहिए ।

इस प्रकार ऊपर के मन्त्रों में परमेश्वर को अन्तर्यामी, सनातन और पवित्र बताकर उसकी उपासना करने का उपदेश दिया है । मनुष्य बैठकर राम का नाम लेता है, ओ३म् का जप करता है, परन्तु यदि उसका मन पवित्र नहीं और उसने अन्तर्यामी भगवान् के वास्तविक स्वरूप को समझा नहीं तो उसकी यह प्रार्थना बेकार है । जब हमारा मन किसी की श्रद्धा और भक्ति में लग जाता है तब हमें उसके सिवाय किसी का ध्यान नहीं रहता ।

अकबर बादशाह एक बार नमाज का वस्त्र बिछाकर नमाज पढ़ने लगे । इतने में एक स्त्री अपनी चिन्ता में डूबी हुई अपने पति को खोजते हुए इधर-उधर दृष्टि डालती चली जा रही थी । उसे बादशाह का जमीन पर बिछा हुआ कपड़ा दिखाई नहीं दिया, और वह उस पर पैर रखती आगे बढ़ गई । बादशाह को क्रोध तो आया पर वे उस समय नमाज पढ़ रहे थे, अतः कुछ बोले नहीं । थोड़ी देर बाद वह अपने पति के साथ लौट रही थी । बादशाह नमाज पढ़ चुके थे । उन्होंने उसे रोका और बोले "तुझे दीखा नहीं—मैं नमाज में था···प्रभुभक्ति में था । जाएनमाज भी तुझे दिखाई नहीं दिया ? पग रखती चली गई ? मैं दिल्ली का बादशाह हूँ ।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

करता है, उसमें एक स्वाभाविक आकर्षण होता है—ऐसे बहादुर की यात्रा सरल हो जाती है, उसकी आत्मा पवित्र बन जाती है, ऐसे व्यक्ति के समीप प्रभु आ जाते हैं और ऐसे ही प्रभुभक्त, बहादुर, सरल और श्रमी व्यक्ति को संसार प्रणाम करता है, लोग उसके पास खिंचे चले आते हैं। संसार को कुछ दे जानेवाले सभी व्यक्तियों का जीवन सरल, निष्कपट और पवित्र रहा है।

घट-घट व्यापक 'ओ३म्'

'ओ३म्' परमात्मा का मुख्य नाम है। हम इस 'ओ३म्' या प्रभु के जितने निकट होंगे उतनी ही हमारी शक्तियाँ बढ़ेंगी। यदि हम उसके साथ अपनी एकता का अनुभव कर लें तो हमारे जीवन में नया उल्लास, नया उत्साह व शक्ति आ जाएगी। वास्तव में विश्व में एक ही तत्त्व काम कर रहा है, एक ही जीवन, एक ही सत्य वर्तमान है। हम सब उस दैवीय प्रवाह की ओर जा रहे हैं जो ईश्वर तक जाता है। यह भावना हममें एक अलौकिक प्रोत्साहन देती है जिससे हमारे मानसिक दुःख और भय दूर हो जाते हैं। क्यों दूर होते हैं? उस समय हम परमतत्त्व ब्रह्म से, प्रभु से अपना सम्बन्ध समझने लगते हैं और उसकी उपासना हममें तथा उसमें एकता की स्थापना करती है और इस अनुभूति से हमारा जीवन एक अपूर्व अलौकिकता से परिपूर्ण हो जाता है, महान् आनन्द, महान् सन्तोष से भर जाता है।

इस प्रभु की व्यापकता और उससे एकता समझने से पूर्व हमारे मन में यह स्वाभाविक इच्छा उत्पन्न होती है कि 'यह ब्रह्म है क्या?' इस ब्रह्म का अनेक रूपों में लक्षण किया गया है। 'तैत्तिरीयोपनिषद्' में उसे **"सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म"** कहा है तो 'बृहदारण्यकोपनिषद्' (३।९।५०) में **'विज्ञानमानन्दं ब्रह्म'** कहा है अर्थात् ब्रह्म सत्य (सत्) ज्ञान (चित्) और आनन्दरूप है अर्थात् वह सच्चिदानन्दस्वरूप है। इस प्रकार सब गुणों का तीन ही गुणों में समावेश करके वर्णन किया गया है। अनेक स्थानों पर परमेश्वर के परस्पर-विरुद्ध गुणों को एक करके ब्रह्म का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि ब्रह्म अणु से भी छोटा और बड़े से भी बड़ा है। **'अणोरणीयान्महतो महीयान्'** (कठो०२।२०), **'तदेजति तन्नैजति तद् दूरे तद्वन्तिके'** अर्थात् वह हिलता है और हिलता भी नहीं, वह दूर है और समीप भी है। (ईश० ५) अथवा **'सर्वेन्द्रियगुणाभासं'** होकर भी **'सर्वेन्द्रियविवर्जितं'** (श्वेता० ३।१७) है। मृत्यु ने नचिकेता को कहा है प्रभु के सब लक्षणों को छोड़ दो और जो धर्म-अधर्म, कृत-अकृत और भूत-भव्य के परे हो उसे ही ब्रह्म जानो (कठ० २।१४), नामरूपात्मक मूर्त या अमूर्त पदार्थों के परे जो अदृश्य या अवर्णनीय है उसे ही परब्रह्म समझो (बृहद् २।३।६) अधिक क्या कहें, जिन पदार्थों का कुछ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कपड़े की जेब में रख देता था। मुझे पता था कि तुम मेरी सब चीजें देखोगे, अपने टँगे हुए कपड़े नहीं। मैं सुबह उठकर उसे ले लेता था। आज वह बिक गया।"

इसका दार्ष्टान्त यह है—इसी प्रकार परमेश्वर सबके हृदयों में विद्यमान है। वह सनातनकाल से विश्व के कण-कण के अन्दर है। मनुष्य के अन्तःकरण में है, परन्तु मनुष्य उसे खोजने के लिए बाहर भटकता रहता है, इधर-उधर दौड़ता रहता है, पर वह उसे नहीं पाता। उसे पाना है तो दूसरों की जेब न देखकर, अपनी जेब देखो। वह हीरा तुम्हें मिलेगा। इसीलिए कबीर ने कहा है—

कस्तूरी कुण्डलि बसै,
मृग खोजे बन माँहि।
ऐसे घटि-घटि राम हैं,
दुनिया देखे नाँहि॥

प्रभु पवित्र है, अतः हमें भी आत्म-परिष्कार करना चाहिए। मनुष्य के लिए आत्मा की शुद्धता सबसे मूल्यवान् वस्तु है। बिना इस शुद्धता के भगवान् नहीं मिल सकते। इस आत्मा की पवित्रता के लिए हमें आत्मा को उच्च बनाना होगा। इसको उच्च बनाने के लिए अपने पड़ोसी से प्यार कीजिए अर्थात् जो कुछ आपको अपने लिए अच्छा नहीं लगता वैसा व्यवहार अपने पड़ोसी से भी मत कीजिए। आत्मा की पवित्रता ही आपके जीवन का निर्माण करती है। अपनी मानसिक शान्ति और अपने स्वास्थ्य का भी मूल्य आपको समझना चाहिए। इनकी प्राप्ति और इनको बनाये रखने के लिए अवश्य प्रयत्न कीजिए। याद रखिए परमेश्वर सुन्दर और पवित्र है। इसे इस प्रकार भी कह सकते हैं कि सौन्दर्य ईश्वर का प्रतिबिम्ब है। पवित्रता और सदाचार की भाँति वह आत्मा का सहचर है। सौन्दर्य मनुष्य के रंग और उसकी बनावट में नहीं, उसके अच्छे कार्यों में निहित है। जब मनुष्य ईमानदारी से रहता है, तो वह जो उसे मिलता है उसे धन्यवादपूर्वक ग्रहण करता है, बहादुरी से कठिनाइयों का मुकाबला करता हुआ कर्तव्यपथ पर डटा रहता है तब वह परम सौन्दर्यवान् प्रभु के दर्शन करता है। सात्त्विक जीवन का सौन्दर्य क्षण-स्थायी नहीं होता, वह सतत प्रवाहिणी भागीरथी है जिसकी स्मृति-मात्र से आदमी पवित्र हो जाता है। सौन्दर्यपूर्ण, पवित्र ईश्वर को प्राप्त करने के लिए मनुष्य का मस्तिष्क शान्त होना चाहिए, उसमें विरक्ति, सन्तोष और निःस्वार्थता की भावना होनी चाहिए। मैं आपसे कहूँगा कि यदि आप अन्तर्यामी, सनातन और पवित्र प्रभु के प्रेम से अपने को प्रभावित करना चाहते हैं तो आप केवल अच्छी बातें ही मुख से निकालें, अच्छी बातें ही देखें-सुनें और सोचें। प्रभु को प्राप्त करने के लिए सरल, निष्कपट और शक्तिशाली बनिये। सफलता तक पहुँचने की राह न सीधी है, न समतल। सफलता प्राप्त करने के लिए निश्चय, इच्छाशक्ति, हिम्मत और श्रम चाहिए। वह मनुष्य जो बढ़कर परिश्रम से कार्य

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नाम दिया जा सकता है, उन सबसे भी परे जो है, वही ब्रह्म है और ब्रह्म का अव्यक्त, निर्गुण, निराकार स्वरूप दिखलाने के लिए 'नेति नेति' एक छोटा-सा निर्देश, आदेश या सूत्र ही हो गया है। बृहदारण्यकोपनिषद् में उसका बार-बार प्रयोग हुआ है (बृ० ३।६।२६,४।२।४, ४।२२।४, ४।४।५)। इसी प्रकार दूसरी उपनिषदों में भी परब्रह्म के निर्गुण, निराकार, अचिन्त्य रूप का वर्णन पाया जाता है, जैसे **'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह'** (तैत्ति० २।६), अद्रेश्यं (अदृश्यं), अग्राह्यम् (मु० १।१।६) **'न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा'** न आँख से, न वाणी से ग्रहण किया जा सकता है। अथवा—

अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथाऽरसं नित्यमगन्धवच्च यत्।
अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं निचाय्य तन्मृत्युमुखात् प्रमुच्यते।।

वह परब्रह्म परमेश्वर पंचमहाभूतों के शब्द, स्पर्श रूप, रस और गन्ध—इन पाँच गुणों से रहित, अनादि, अनन्त और अव्यय है। (कठोपनिषद् ३।१५)

यद्यपि परमेश्वर निराकार, अदृश्य, निर्गुण है परन्तु प्रत्यक्ष और अनुमानादि प्रमाणों से परमेश्वर की सत्ता है ही। देखनेवालों को यह परमेश्वर सर्वत्र दिखाई देगा। जरा निगाह उठाओ उसकी पताकाएँ दिखाई देंगी जो उसकी ओर संकेत कर रही होंगी।

फूल की पंखुड़ियों में, तितली के पंखों में, परिन्दों के परों में, बादलों में, इन्द्र-धनुष में, प्रभात की ऊषा में, संध्या की छिटकती लाली में वही चित्रकार बैठा अपनी तूलिका से नाना प्रकार के रंग भर रहा है। पवन के झकोरों में, झरनों की झर-झर में, बादलों के गर्जन में, पक्षियों के कलरव में, प्रपातों की झंकार में, मयूरों के नर्तन में, कोयल की कू-कू में, पपीहे की पी-पी में, नदियों की कलकल में वही गवैया बैठा अपने संगीत की सुरीली तान छेड़ रहा है।

ऊषा में किसकी छवि मुस्करा रही है? श्यामल मेघों में किसका स्निग्ध केशपाश लहरा उठता है? मन्द-मन्द बहते मलयानिल में किसका सौरभ-भरा उच्छ्वास है? धान के बहुरंगी खेतों में किसका हरित अंचल लहरा रहा है? रवि-शशि किसके लोल कुण्डल हैं? इन्द्रधनुष किस चितचोर का जादूभरा स्मित है? पृथिवी किसका पग है? अन्तरिक्ष किसका उदर है? द्युलोक किसका विशाल भाल है? रोज सवेरे सैकड़ों मील दूर से चलकर आलोकदूत किसका सन्देश कलियों के कान में कहने पुष्पों की क्यारियों में आ पहुँचता है और किस संदेश को सुनकर कलियाँ अपना सुकुमार घूंघट उठाकर सत्वर झाँकने लगती हैं?

आसमान में टिमटिमाते तारों की दीपमाला उसी का स्वागत कर रही है। वृक्षों की मधुर गुहरानियाँ किसकी महिमा जता रही हैं? ऊँचे खड़े पहाड़ों की गगनचुम्बी चोटियाँ किसकी ऊँचाई पाने के लिए उछल रही हैं? अगाध समुद्र की अचिन्तनीय गहराई किसका गाम्भीर्य प्रकट कर रही है। पत्ते-पत्ते की विचित्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रचना में उसी शिल्पी की शिल्पकला का चमत्कार है। सूर्य का उष्ण प्रकाश और चन्द्र की शीतल चाँदनी उसी वैज्ञानिक का आविष्कार है। सूर्य के प्रकाश में, चन्द्र की चाँदनी में, तारों की टिमटिमाती ज्योति में, विद्युत् की चमक में, अग्नि के तेज में, प्रभात की लाल ऊषा में, सन्ध्या की रंगीली छटा में उसी ज्योतिस्वरूप की ज्योति जगमगा रही है। इस सम्पूर्ण विश्व में वह प्रभु ही प्रभु विद्यमान है। सभी शक्तियाँ उसी की खोज में हैं। तभी तो 'प्रसादजी' ने कहा है—

महानील इस परम व्योम में अन्तरिक्ष में ज्योतिर्मान।
ग्रह नक्षत्र और विद्युत्कण किसका करते वे सन्धान?

अन्त में वे कहते हैं—

हे विराट्! हे विश्वदेव!
तुम कुछ हो ऐसा होता भान।

मनुष्य उस प्रभु को प्राप्त करना तो चाहते हैं, परन्तु इस सर्वव्यापक को खोजने के लिए इधर-उधर भटकते रहते हैं। उसके लिए दूर जाने की आवश्यकता नहीं। वह प्रभु सर्वत्र व्यापक है तो आत्मा में तो होगा ही, अतः नानक ने कहा है—

काहे रे वन खोजन जाई
सर्व निवासी सदा अलेपा, तोही संग समाई।
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है, मुकुर मध्य ज्यों छाईं।
वैसे ही हरि बसैं निरन्तर, घट ही खोजो भाई॥

और जब परमेश्वर के घट-घट व्यापक रूप को हम जान लेंगे तो उस समय अपने और पराये का भेद मिट जाएगा, शत्रु और मित्र की समस्या हल हो जाएगी। सन्त कवि हरिदास कहते हैं—

अब हौं कासौं बैर करौं?
कहत पुकारि प्रभु निज मुख से,
घट घट हौं विहरौं।

कहो अब मैं किससे बैर करूँ, जबकि मेरे प्रभु खुद पुकार-पुकारकर कह रहे हैं कि "घट-घट में मैं ही विहार कर रहा हूँ।"

ईशोपनिषद् या यजुर्वेद के ४०वें अध्याय में कहा गया है—

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

इस ब्रह्माण्ड में जो जगत् है वह सब ईश्वर के निवास करने योग्य है, ईश्वर इसके अणु-अणु और कण-कण में विद्यमान है। ईश्वर इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में साधिकार बसा हुआ है। कैसे? **'सूत्रे मणिगणा इव'** जैसे धागे में मणियाँ गुँथी हुई होती हैं। वेद में कहा है **'स ओतःप्रोतश्च विभुः प्रजासु'** (यजु० ३२।८) वह परमात्मा सभी प्रजाओं में ताने-बाने के समान ओत-प्रोत है।

किसी उर्दू के कवि ने लिखा है—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जब इस प्रभु की व्यापकता का हम वास्तव में सबमें अनुभव कर लेते हैं तब हम सभी पापों और वैर तथा द्वेष से बच जाते हैं। गीता कहती है—

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि। —गीता ६।२९

सारे प्राणी मुझमें हैं और मैं सबमें हूँ।

ईशोपनिषद् भी इसी बात को कहती है—

यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते।।

जो व्यक्ति सब प्राणियों को अपने में और अपने को सबमें समझता है वह किसी से घृणा नहीं कर सकता। जब हम परमेश्वर को सर्वव्यापक समझेंगे उस समय अपराधों का दण्ड पाने से बचने की प्रवृत्ति का अन्त हो जाएगा और 'दादूदयाल' की भाँति हम भी कहेंगे—

गुनहगार अपराधी तेरे भाजि कहाँ हम जाँहि।
'दादू' देख्या सोधि सब तुम बिन कहिं न समाँहि।।

तेरे गुनहगार भागें तो आखिर भागकर जाएँ कहाँ? छिपने के तो सारे ठौर खोज डाले सरकार! पर, जहाँ भी गये वहाँ तुझे मौजूद पाया। दादूदयाल ने परमेश्वर की सर्वव्यापकता का वर्णन करते हुए लिखा है—

दादू देखौं दयाल को, सकल रह्या भरपूर।
रोम रोम में रमि रह्या, तू जिनि जाणें दूर।।

अपने दयालु मालिक को मैं हर जगह मौजूद पाता हूँ, मेरा प्रभु रोम-रोम में रम रहा है। मत समझ कि मेरा स्वामी मुझसे दूर है।

गरीबदास को सर्वत्र प्रभु के दर्शन हो रहे हैं—

साहब तेरी साहिबी, क्या कहूँ करतार,
पलक पलक की दीठि में, पूरन ब्रह्म हमार।

कबीर ने भी प्रत्येक स्थान पर प्रभु के दर्शन करते हुए कहा है—

सब घट मेरा साइयाँ, सूनी सेज न कोई,
वा घट की बलिहारियाँ, जा घट परगट होई।

आगे वे कहते हैं—

पावक रूपी साँइयाँ, सब घट रह्या समाई,
चित चकमक लागै नहीं, ताते बुझ बुझ जाई।

मेरा स्वामी आग की भाँति संसार के प्रत्येक रूप में समाया हुआ है। पर लगन के चकमक से चित्त लगे तब न! इसी से तो मेरी यह लौ बुझ-बुझ जाती है।

इस सर्वव्यापक प्रभु को कौन प्राप्त कर सकता है? दादूदयाल कहते हैं—

सब घट माही रमि रह्या, बिरला बूझै कोय,
सोई बूझै राम को, जो रामसनेही होय।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तू हर जर्रे में पिनहा है, जहाँ तुझमें समाया है।
मुक़य्यद इक जगह या रब तू हरगिज हो नहीं सकता ।।

ईश्वर की सर्वव्यापकता के विषय में मुण्डकोपनिषद् कहती है—

ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्ताद् ब्रह्म पश्चाद् ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण ।
अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम् ।।

यह अमृतरूप ब्रह्म ही आगे है, वही पीछे है, वही दाहिनी ओर है और वही बाईं ओर है। वही नीचे और ऊपर फैला हुआ है। यह सारा विश्व ब्रह्म से ओत-प्रोत है। जो कुछ श्रेष्ठतम है, वह ब्रह्म का प्रकाश है।

वेद में कहा है—

सविता पश्चाद् सविता पुरस्तात्सवितोत्तरात्तात्सविताधरात्तात्।
सविता नः सुवतु सर्वतातिं सविता नो रास्तां दीर्घमायुः।।

—ऋ० १०।३६।१४

सर्वोत्पादक परमात्मा पीछे की ओर है और आगे की ओर भी। वही सर्वप्रेरक प्रभु ऊपर की ओर है और वही नीचे भी है। यह सर्वप्रेरक और सर्वव्यापक प्रभु हमें इष्ट पदार्थ औदीर्घ जीवन प्रदान करे।

विश्वतश्चक्षुरुतविश्वतोमुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् ।
सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः ।।

यजु० १७।१९

उस परमात्मा की सब ओर आँखें हैं, सब ओर मुख हैं, सब ओर भुजाएँ हैं और सब ओर पैर हैं। वह देव क्रियाशील परमाणु आदि से सूर्य और पृथिवीलोक को कार्यरूप में प्रकट करता हुआ अनन्त बल-पराक्रम से सब जगत् को प्राप्त हो रहा है। तुलसीदास कहते हैं—

हरि व्यापक सर्वत्र समाना ।
प्रेम ते प्रकट होइ मैं जाना ।।

ईश्वर की सर्वव्यापकता से क्या लाभ है ? वेद व्यास कहते हैं—

एकोऽहमस्मीति च मन्यसे त्वं न हृच्छयं वेत्सि मुनिं पुराणम्।
यो वेदिता कर्मण पापकस्य तस्यान्तिके त्वं वृजिनं करोषि।।

मैं अकेला हूँ तू ऐसा मानता है, हृदय में निवास करनेवाले परमात्मा को तू नहीं जानता। ये प्रभु तो तेरे सब पापकर्मों को जानते हैं। अरे, तू उन्हीं के समक्ष पाप करता है ?

यज्ञ के प्रारम्भ के मन्त्रों में उपासक कहता है—

अमृतोपस्तरणमसि ।

ईश्वर हमारे नीचे का बिस्तरा है।

अमृतापिधानमसि ।

प्रभु हमारे ऊपर का ओढ़ना है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वह दिव्य परमात्मा सब दिशा-उपदिशाओं में पूर्णतया व्यापक है। वह सबसे प्राचीन, सबसे प्रसिद्ध और सर्वत्र विद्यमान है। वह सबके बीच में व्यापक है। वह जैसा इस समय सर्वत्र उपस्थित है, वैसा ही आगे भी रहेगा। वह मुख आदि अवयवों की शक्तियों को, प्रत्येक पदार्थ में व्यापक रहता हुआ, धारण करता है।

यजुर्वेद ३२।४ में आया है :—

एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः।
स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः ॥

—य० ३२।४

(ह) निश्चय से (एषः देवः) यह देव अर्थात् दिव्य परमात्मा (सर्वाः प्रदिशः) सब दिशाओं-उपदिशाओं में (अनु) साथ-साथ रहता है। (स ह:) वह निश्चय से (पूर्वः) प्राचीन और (जातः) प्रसिद्ध है (स उ) वह निश्चय से (गर्भे अन्तः) सबके बीच में है (स एव जातः) वह निकट ही है और निश्चय से (सः) वह ही सदा (जनिष्यमाणः) निकट रहेगा। हे (जनाः) लोगो, वह परमात्मा (सर्वतः मुखः) सर्वत्र मुख आदि अवयवों की शक्ति को धारण करनेवाला (प्रत्यङ्) प्रत्येक पदार्थ में (तिष्ठति) रहता है।

वेनस्तत्पश्यन्निहितं गुहासद् यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्।
तस्मिन्निदꣳ सञ्च वि चैति सर्वं स ओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु ॥

—य० ३२।८

(वेनः) ज्ञानी मनुष्य (तत्) उस (गुहानिहितं) गुप्तस्थान में अथवा बुद्धि में रहनेवाले तथा (सत्) त्रिकालाबाधित नित्य ब्रह्म को (पश्यत्) देखता है (यत्र) जिस ब्रह्म में (विश्वं) सब जगत् (एकनीडम्) एक आश्रय को (भवति) प्राप्त होता है। (तस्मिन्) उस ब्रह्म में (इदं सर्वं सं एति) यह सब जगत् एकत्रित होता है (च वि एति) और पृथक् भी होता है। (सः) वह परमात्मा (प्रजासु) सब प्रजाओं में (विभूः) व्यापक है और (ओतःप्रोतश्च) ओत और प्रोत हुआ है।

अर्थात् ज्ञानी मनुष्य उस परमात्मा को प्रत्येक पदार्थ में छिपा हुआ, नित्य, सबका आश्रय, सब जगत् में व्यापक और कपड़े में ताने-बाने के समान सब जगत् में व्यापक जानता और अनुभव करता है।

मनुष्य के मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि सृष्टि बनाने के बाद क्या परमात्मा सृष्टि में स्वयं भी प्रविष्ट हुआ या नहीं ? इसका उत्तर देते हुए वेद में कहा और बतलाया गया है कि उस आत्मा से रिक्त कोई भी सृष्टि का अंश नहीं है। इस विषय में स्कम्भसूक्त का एक मन्त्र है—

यत् परममवमं यच्च मध्यमं प्रजापतिः ससृजे विश्वरूपम्।
कियता स्कम्भः प्रविवेश तत्र यन्न प्राविशत् कियत् तद् बभूव ॥

—अ० १०।७।८

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मेरा प्रभु तो हर घट में, हर कण में रम रहा है, पर इस भेद को समझता कोई विरला ही है। इसकी व्यापकता तो वही समझेगा, जो उसके प्रेम के गहरे रंग में रंग गया होगा।

वेदों में भी प्रभु की सर्वव्यापकता का स्थान-स्थान पर प्रतिपादन किया गया है और कहा है :—

तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम् ॥

ऋ० १।२२।२०

(विष्णोः) सर्वव्यापक परमात्मा का (तत्) वह **(परमं पदं)** परम पद है, जिसको **(सूरयः)** ज्ञानी लोग **(सदा)** सदा **(पश्यन्ति)** देखते हैं। जिस प्रकार **(दिवीव)** द्युलोक में **(चक्षुः)** जगत् का सूर्यरूपी आँख **(आततम्)** खोलकर रखा है।

ज्ञानी लोग, वे लोग जिन्होंने परमेश्वर के स्वरूप को समझ लिया है उन्हें परमेश्वर सूर्य की तरह दिखाई देता है।

तद्विप्रासो विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते। विष्णोर्यत् परमं पदम् ॥

ऋ० १।२१।२१

विष्णु का जो परम पद है उसे **(विपन्यवः)** कवि **(विद्वांसः)** ज्ञानी **(जागृवांसः)** जाग्रत् रहनेवाले अर्थात् जो दक्ष होते हैं वे **(समिन्धते)** प्रकाशित करते हैं।

ऋग्वेद के एक मन्त्र में परमेश्वर की व्यापकता का उल्लेख करते हुए आनन्द-प्राप्ति का मार्ग भी बताया है—

यो रजांसि विममे पार्थिवानि त्रिश्चिद्विष्णुर्मनवे बाधिताय।
तस्य ते शर्मन्नुपदद्यमाने राया मदेम तन्वा तना च॥

—ऋ० ६।४९।१३

(बाधिताय मनवे) बद्ध मनुष्य के लिए अर्थात् उसको पुरुषार्थ का अवसर देने के लिए **(यः)** जिस **(विष्णुः)** व्यापक ईश्वर ने **(पार्थिवानि)** पार्थिव **(त्रिरजांसि)** तीन लोक **(विममे)** उत्पन्न किये **(तस्य ते)** तेरा **(शर्मन् उपदद्यमाने)** आश्रय प्राप्त करने पर **(राया)** धन से **(तन्वा)** शरीर से तथा **(तना)** पुत्र से **(मदेम)** हम आनन्दित हो जाएँगे।

यो अग्नौ रुद्रो यो अप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश।
य इमा विश्वा भुवनानि चाक्लृपे तस्मै रुद्राय नमो अस्त्वग्नये॥

—अ० ७।८७।१

जो रुद्र अग्नि में, जो जल में और जो ओषधियों और **(वीरुधः)** वनस्पतियों में **(आविवेश)** व्यापक है। **(यः)** जो **(इमाः विश्वा भुवनानि)** इन सब भुवनों को **(चाक्लृपे)** रचता है **(तस्मै अग्नये रुद्राय नमः अस्तु)** उस अग्निरूप रुद्र के लिए मेरा नमस्कार है।

इसमें रुद्र की व्यापकता का उल्लेख किया गया है। रुद्र परमात्मा को इसलिए कहते हैं कि वह दुष्टों को रुलाता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ईश्वर सबका रक्षक है

ऋग्वेद ४।३१।३ में परमेश्वर को संसार का रक्षक बताया गया है और कहा गया है—

अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम् ।
शतं भवास्यूतिभिः ।।

अर्थात् हे ईश्वर तू (नः) हम सब (सखीनां) मित्रों और (जरितॄणां) उपासकों का (शतं ऊतिभिः) सैंकड़ों रक्षणों द्वारा (अभि सु अविता) सब प्रकार से उत्तम रक्षक (भवासि) है।

इस मन्त्र का तात्पर्य यह है कि परमेश्वर हमारा मित्र है और मित्र अपने मित्र की सदा और सब प्रकार से रक्षा करता है इसलिए परमेश्वर भी हमारी सदा और सैंकड़ों प्रकार से रक्षा करता है। यह मित्र साधारण मित्रों की तरह नहीं। इसके पास ऐश्वर्य, धन-धान्य, शक्ति, बुद्धि, बल और पराक्रम सभी विद्यमान हैं। इसलिए यह तो हमारी सभी क्षेत्रों में सब प्रकार से रक्षा करने में समर्थ हो सकता है। वेद ने इसके विषय में कहा है—

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम ।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह ।।

सब ऐश्वर्यों का अधिपति होने से ही परमेश्वर भगवान् कहलाता है। हे देवो ! दिव्य गुणों से युक्त या दिव्य गुणों की ओर चलनेवाले लोगो, उस 'भग' से आओ हम भी दिव्य महिमाशाली बनें। संसार के सभी मनुष्य, सभी प्राणी, सभी जीवधारी उस ऐश्वर्यशाली प्रभु को अपनी रक्षा के लिए, अपने लिए ऐश्वर्यों की प्राप्ति के लिए आह्वान करते हैं। हे भग ! वह तुम इस संसार में हमारे पथ-प्रदर्शक बनो।

भगवान् हमारी कई प्रकार से रक्षा करता है। आर्यसमाज के नेता तथा 'तेज' के सम्पादक श्री देशबन्धु जी गुप्त वायुयान से दिल्ली से कलकत्ता की ओर रवाना हुए। अखिल भारतीय पत्रकार समिति के प्रधान थे। समिति की स्टैंडिंग कमेटी का अधिवेशन हो रहा था। इसमें उन्हें पहुँचना था। इसी अधिवेशन में महात्मा गांधी के सुपुत्र और 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के प्रबन्ध सम्पादक श्री देवदास गांधी भी जाना चाहते थे, किन्तु इन्हें सीट नहीं मिली। बड़ी दौड़धूप की। उन्होंने कई यात्रियों से कहा। किन्तु किसी ने उनकी बात न मानी। देवदास जी बहुत दुःखी हुए। लोगों को बुरा-भला कहा। किन्तु दूसरे दिन प्रातः ही कुछ अन्धकार में यह वायुयान जब कलकत्ता के पास पहुँचा तो आकाश में धुन्ध बहुत थी। नीचे उतरने का मार्ग इसको नहीं मिला। समुद्र के किनारे नारियल के वृक्षों का जंगल था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अर्थात् जो परम, कनिष्ठ और मध्यम विश्व के रूप को प्रजापति उत्पन्न करता है उस त्रिविध जगत् में सर्वाधार आत्मा, कितने से प्रविष्ट हुआ है और जहाँ प्रविष्ट नहीं है वह कितना है ? अर्थात् कोई वस्तु ऐसी नहीं जिसमें वह नहीं है।

अथर्ववेद १०।७।९ में यह प्रश्न उठाया गया है कि भूतकाल में जिस प्रकार आत्मा का प्रवेश होता था वैसा ही भविष्यकाल में भी होगा या नहीं तथा एक ही पदार्थ को सहस्रधा विभक्त करने पर उसके प्रत्येक अंश में यह आत्मा प्रविष्ट होता है या नहीं ? इस प्रश्न का उत्तर है कि वह परमेश्वर सर्वत्र एक जैसा व्यापक है।

सर्वत्र व्यापक, ज्ञानपरिपूर्ण परमात्मा से जीवन में पूर्णता का उदय होता है। इसलिए उस परमात्मा को जानने का हमें यत्न करना चाहिए। अ० १०।८।२९ में देखिए—

पूर्णात् पूर्णमुदचति पूर्णं पूर्णेन सिच्यते।
उतो तदद्य विद्याम यतस्तत् परिषिच्यते॥

पूर्ण से पूर्ण का उदय होता है, पूर्ण को पूर्ण ही जीवन देता है, आज उसको हम जानें जिससे वह चारों ओर सींचा जाता है।

अन्त में प्रभु की सत्ता को हृदय में धारण करनेवालों में मुख्य स्वामी दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा गांधी के जीवनों को देखते हुए आइए हम गाएँ—

चतुर्दिक् तुम्हीं नाथ ! छाये हुए हो,
मधुर रूप अपना बिछाये हुए हो।
तुम्हीं व्रतविधाता, नियन्ता जगत् के,
स्वयं भी नियम सब निभाये हुए हो।
प्रभो ! शक्तियाँ दिव्य अनुपम तुम्हारी,
तुम्हीं दूर, तुम पास, आये हुए हो।
करें हम भजन पुण्य शुभ कर्म जितने,
सभी में प्रथम स्थान पाये हुए हो।
तुम्हारी करें वन्दना देव ! निशिदिन,
तुम्हीं इस हृदय में समाये हुए हो।

आइए, हम भी सम्पूर्ण हृदय से ईश्वर की सत्ता और सर्वव्यापकता में विश्वास रख प्रभु के समीप जाएँ। वह अपने सौन्दर्य से हमें भी सुन्दर, अपने ऐश्वर्य से ऐश्वर्य-शाली, अपनी उज्ज्वलता से उज्ज्वल बना देगा और उस समय हम 'सत्यं, शिवम्, सुन्दरम्' बन सकेंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ईश्वर सबका रक्षक है

ऋग्वेद ४।३१।३ में परमेश्वर को संसार का रक्षक बताया गया है और कहा गया है—

अभी षु णः सखीनामविता जरितॄणाम् ।
शतं भवास्यूतिभिः ।।

अर्थात् हे ईश्वर तू (नः) हम सब (सखीनां) मित्रों और (जरितॄणां) उपासकों का (शतं ऊतिभिः) सैकड़ों रक्षणों द्वारा (अभि सु अविता) सब प्रकार से उत्तम रक्षक (भवासि) है।

इस मन्त्र का तात्पर्य यह है कि परमेश्वर हमारा मित्र है और मित्र अपने मित्र की सदा और सब प्रकार से रक्षा करता है इसलिए परमेश्वर भी हमारी सदा और सैकड़ों प्रकार से रक्षा करता है। यह मित्र साधारण मित्रों की तरह नहीं। इसके पास ऐश्वर्य, धन-धान्य, शक्ति, बुद्धि, बल और पराक्रम सभी विद्यमान हैं। इसलिए यह तो हमारी सभी क्षेत्रों में सब प्रकार से रक्षा करने में समर्थ हो सकता है। वेद ने इसके विषय में कहा है—

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह ।।

सब ऐश्वर्यों का अधिपति होने से ही परमेश्वर भगवान् कहलाता है। हे देवो ! दिव्य गुणों से युक्त या दिव्य गुणों की ओर चलनेवाले लोगो, उस 'भग' से आओ हम भी दिव्य महिमाशाली बनें। संसार के सभी मनुष्य, सभी प्राणी, सभी जीवधारी उस ऐश्वर्यशाली प्रभु को अपनी रक्षा के लिए, अपने लिए ऐश्वर्यों की प्राप्ति के लिए आह्वान करते हैं। हे भग ! वह तुम इस संसार में हमारे पथ-प्रदर्शक बनो।

भगवान् हमारी कई प्रकार से रक्षा करता है। आर्यसमाज के नेता तथा 'तेज' के सम्पादक श्री देशबन्धु जी गुप्त वायुयान से दिल्ली से कलकत्ता की ओर रवाना हुए। अखिल भारतीय पत्रकार समिति के प्रधान थे। समिति की स्टैंडिंग कमेटी का अधिवेशन हो रहा था। इसमें उन्हें पहुँचना था। इसी अधिवेशन में महात्मा गांधी के सुपुत्र और 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के प्रबन्ध सम्पादक श्री देवदास गांधी भी जाना चाहते थे, किन्तु इन्हें सीट नहीं मिली। बड़ी दौड़धूप की। उन्होंने कई यात्रियों से कहा। किन्तु किसी ने उनकी बात न मानी। देवदास जी बहुत दुःखी हुए। लोगों को बुरा-भला कहा। किन्तु दूसरे दिन प्रातः ही कुछ अन्धकार में यह वायुयान जब कलकत्ता के पास पहुँचा तो आकाश में धुन्ध बहुत थी। नीचे उतरने का मार्ग इसको नहीं मिला। समुद्र के किनारे नारियल के वृक्षों का जंगल था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इन वृक्षों से टकराकर जहाज चकनाचूर हो गया। यह हृदयविदारक सूचना जब दिल्ली पहुँची तो देवदास चौंक उठे। उन्होंने परमेश्वर को धन्यवाद दिया और कहा "धन्य है भगवन् ! तू हम सबकी सैकड़ों रक्षणों द्वारा रक्षा करता है। तू हमारी माँ है जो कभी हमारे सोचे जानेवाले कार्यों में बाधा डालकर हमारे जीवन की नई सुविधाओं का ध्यान रखती है।"

एक कहानी बचपन में पढ़ी थी। एक राजा था। वह अपने मन्त्रियों के साथ शिकार खेलने गया। रास्ते में शिकार न मिलने से वह तथा उसके मन्त्री महोदय अन्य साथियों से विलग हो गये और भटकने लगे। अचानक एक जगह राजा के हाथ में चोट लग गई। खून बहने लगा और पीड़ा होने लगी। उसने अपनी तकलीफ मन्त्री से कही। मन्त्री ने कहा ईश्वर जो करता है ठीक ही करता है। राजा ने इसे अपने ऊपर व्यंग्य समझा और उस जंगल में ही मन्त्री को अपने से पृथक् और सेवा से मुक्त कर दिया। मन्त्री वहाँ से अपना रास्ता लेकर चलता बना। दूसरी ओर राजा बढ़ा—अकेला—बिल्कुल अनजान। भटकते हुए जब वह कुछ दूर गया तो उसे कुछ डाकू मिले। वे देवी की पूजा कर रहे थे और उसपर बलि चढ़ाने के लिए किसी व्यक्ति की आवश्यकता थी। अब क्या था, राजा को देखकर उनकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा और उन्होंने उसे पकड़ लिया। बलि चढ़ाने की तैयारी होने लगी। बलि चढ़ाने से पूर्व उसको स्नान कराया गया। स्नान कराते समय डाकुओं के मुखिया की नजर अचानक उसके हाथ में लगे घावों पर पड़ी और उसने कहा कि यह आदमी बलि के उपयुक्त नहीं, क्योंकि इसके हाथ में घाव है और क्षत-विक्षत व्यक्ति की बलि चढ़ाई नहीं जा सकती, अतः इसे छोड़ दो और दूसरे की तलाश करो। राजा ने अपना सौभाग्य समझा और वहाँ से किसी तरह अपने राज्य में पहुँचा। उसे अनुभव हुआ कि मैंने मन्त्री को हटाकर अन्याय किया है, क्योंकि मेरा हाथ यदि कटा न होता तो आज मैं बलि चढ़ गया होता। शायद मन्त्री ने इसी भाव से कहा था कि ईश्वर जो करता है उसकी कृपा है। मैंने उसे व्यर्थ में ही अलग किया। उसने मन्त्री को खोजकर बुलवाया तथा उससे कहा, "मन्त्रिवर ! आपने ईश्वर की कृपा का जो उल्लेख किया था वह सच था; मेरे लिए तो उसकी कृपा ही हुई परन्तु यह तो बताइये कि जब मैंने अपनी नौकरी से आपको पृथक् किया तब भी आपने उसे ईश्वर की कृपा कहा। इसमें क्या तत्त्व है ?" मन्त्री ने कहा—महाराज ! वह तो स्पष्ट है। डाकुओं को बलि चढ़ानी थी। उन्होंने आपको पकड़ा और आपको घायल देखकर छोड़ दिया। यदि आपने मुझे अलग न किया होता तो मैं भी आपके साथ पकड़ा जाता और आप तो घाव के कारण छूट जाते और मैं बलि चढ़ा दिया जाता। क्या यह ईश्वर की मेरे ऊपर कृपा नहीं ? राजा ने पुनः मन्त्री को नियुक्त किया। उसकी प्रशंसा की। उसका धन्यवाद किया, क्या यह ईश्वर की रक्षा नहीं ? इस प्रकार ईश्वर हमारी सभी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रकार से रक्षा करता है। वेद के अनेक मन्त्रों में परमेश्वर की रक्षणशक्ति की बात लिखी है—

अग्ने त्वं नो अन्तम उत त्राता शिवो भवा वरूथ्यः।
वसुरग्निर्वसुश्रवा अच्छा नक्षि द्युमत्तमं रयिं दाः ॥

—ऋ० ५।२४।१

हे अग्ने ! (नः त्वं अन्तमः) हमारे लिए तू ही समीप है (उत) और तू ही हमारा (शिवः) कल्याणमय और (वरूथ्यः) वरने योग्य (त्राता) रक्षक है। तू (अग्निः) तेजस्वी (वसुः) सबका निवासक (वसुश्रवाः) निवास के योग्य अन्नादि देनेवाला (अच्छा नक्षि) हमें उत्तम प्रकार प्राप्त हो हमें (द्युमत्तमं) उत्तम तेजयुक्त (रयिं दाः) धन दे।

परमेश्वर हमारे शरीर के प्रत्येक कण में और आत्मा के भीतर भी विद्यमान है, वह हम सबका रक्षक, कल्याण करनेवाला और सबको आधार देनेवाला है, अतः हमें उसकी उपासना करनी चाहिए। इसलिए किसी ने कहा है—

विश्व-सिन्धु अगम, कौन पार करे भाई !
कोई सिवा दीन-बन्धु पड़े ना दिखाई।
कहो दिव्य 'ओम्' नाम वही एक पूर्णकाम,
कठिनकाल शान्तिधाम जपें सन्त साईं।
विश्व-सिन्धु…… ……।
मिटे सकल राग द्वेष, छूट चलें पाप क्लेश,
करो नाथ ! भोग शेष, मिले अब विदाई।
दूर निकट बार-बार, उठे करुण जन पुकार
वही कुशल करे पार, अन्त घड़ी आई।
तुम्हीं एक दीन शरण, कृपा नाव करो तरण,
छोड़ चलें जन्म-मरण, देर क्यों लगाई ॥
विश्व-सिन्धु०……।

एक अन्य मन्त्र में परमेश्वर की रक्षणशक्ति का उल्लेख करते हुए बताया गया है—

त सध्रीचीरूतयो वृष्ण्यानि पौंस्यानि नियुतः सश्चुरिन्द्रम्।
समुद्रं न सिन्धव उक्थशुष्मा उरुव्यचसं गिर आ विशन्ति ॥

—६।३६।३

(तं इन्द्रम्) उस प्रभु के पास (ऊतयः सध्रीचीः) श्रेष्ठ रक्षक शक्तियाँ रहती हैं तथा (वृष्ण्यानि पौंस्यानि) उत्साहवर्धक शक्तियाँ (नियुतः) साथ नियुक्त होकर (सश्चुः) सेवा करती हैं। (सिन्धवः समुद्रं न) नदियाँ जिस रीति से समुद्र को, उसी प्रकार (उक्थशुष्मा गिरः) बल से युक्त स्तुति-प्रार्थना की वाणी (उरु व्यचसं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आविशान्ति) सर्वव्यापक देव के पास पहुँचती हैं अर्थात् परमेश्वर के पास सब प्रकार का रक्षण और बल है, अतः उसी की उपासना करो।

ऋग्वेद के ६।४५।३ में बतलाया गया है कि परमेश्वर ने प्रत्येक व्यक्ति की उन्नति तथा रक्षा के लिए अनेक मार्ग तथा उपाय प्रदान किये हैं और यही कारण है कि लोग उसकी विभिन्न प्रकार से स्तुतियाँ करते हैं।

महीरस्य प्रणीतयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः। नास्य क्षीयन्त ऊतयः।

इसकी उत्तम नीतियाँ बड़ी हैं, प्रशंसाएँ पूर्ण हैं और इसकी रक्षक शक्तियाँ कभी क्षीण नहीं होतीं।

जब हमारा शक्तिशाली रक्षक सदा समीप विद्यमान है तो आइए हम भी निश्चय करें कि अपना जीवन उसी शक्तिशाली प्रभु को अर्पित कर दें। जो कुछ काम करें प्रभु का ध्यान रखकर करें। यदि प्रभु की सेवा में कुछ पत्र-पुष्प चढ़ाना आवश्यक है तो अपनी सारी सम्पदा उसके चरणों में न्यौछावर करने में क्या आनन्द होगा? जीवन का इससे अच्छा क्या उपयोग हो सकता है कि उसका प्रत्येक क्षण प्रभु की सेवा में लगे! हमारा प्रत्येक कार्य, विचार और शब्द उसकी सेवा के लिए हो। यह आप आज से ही शुरू कर सकते हैं। आप अपने जीवन का उपयोग बुद्धिमत्तापूर्वक करें, उसे बुद्धिमत्तापूर्वक चलाएँ। उसका ध्यान सोचने का विषय है—

कैसे तुमको ध्याऊँ ?
शब्दों की सीमा में कैसे,
मैं असीम को लाऊँ,
कभी प्यार से 'पिता' पुकारूँ,
कभी सखा कह तन-मन वारूँ,
पिता बन्धु स्नेही कहकर भी,
पल भर कल ना पाऊँ,
कैसे तुमको ध्याऊँ ?

वरदान देनेवाली वेदमाता

वेद की महिमा अनन्त है। वेद ईश्वर की विमल वाणी है और विश्व के उद्धार और मानव के कल्याण के लिए पृथिवी पर इसका अवतरण हुआ है। वेदप्रवक्ता प्रभु है। उसने वेद द्वारा हमें जो उपदेश दिया है "वह पारिजात से भी अधिक सुगन्धमय और स्फटिक मणि से भी अधिक उज्ज्वल है। वेद के किसी मन्त्र में कुरुक्षेत्र का भैरव रव है, किसी में वीरों की भयंकर हुंकार है, किसी में रणचण्डी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
का प्रचण्ड अट्टहास है, किसी में समरभूमि का विकट झणत्कार है, किसी में लक्ष्मी का मधुर हास्य है, किसी में वृन्दावन का प्रेमप्रवाह है, किसी में दिव्य-शक्ति का नवल नृत्य है और किसी में ब्रह्म-द्रव का ललित विलास है। श्रुति-भगवती जिसे छू देती है वह अमृत से भी अधिक मधुर बन जाता है, जिसे देख लेती है वह चन्द्रिका से अधिक निर्मल हो जाता है और जिसपर अपने पादपद्म रख देती है वह पद्मकान्त मणि से भी अधिक मूल्यवान् हो जाता है।"

सचमुच वेदज्ञान कितना सुन्दर है! उस ज्ञान का दाता प्रभु है, अतः उसका मूल्यवान् होना स्वाभाविक है। ऋग्वेद १०।४९।१ में कहा गया है—

अहं दां गृणते पूर्व्यं वस्वहं ब्रह्म कृणवं मह्यं वर्धनम्।
अहं भुवं यजमानस्य चोदिता यज्वनः साक्षि विश्वस्मिन् भरे।।

—१०।४९।१

(अहं) मैं (गृणते) उपासक के लिए (पूर्व्यं वसु दां) मुख्य या पूर्वसंचित धन देता हूँ। (ब्रह्म कृणवं) मैं वेद रचता हूँ, इसलिए, (मह्यं वर्धनम्) मुझे सब ज्ञानी बधाई देते हैं और मैं ही (यजमानस्य) सत्कर्म करनेवालों को (चोदिता) प्रेरणा करनेवाला (भुवं) होता हूँ और (अयज्वनः) सत्कर्म न करनेवाले को (विश्वस्मिन् भरे) सब युद्धों में, उद्योगों में (साक्षि) पराजय देता हूँ।

इस मन्त्र का भाव यह है कि परमेश्वर ही वेदों की रचना करता है और वह पूर्वकर्मानुसार सबको फल प्रदान करता है।

वैदिक धर्म को माननेवाले तथा सभी आर्ष शास्त्र वेद को नित्य मानते हैं। जैमिनीय मीमांसा में ऐसे-ऐसे अनेक प्रमाण हैं, जिनसे वेद की नित्यता सिद्ध होती है। कोषीतकि ब्राह्मण के मत से (१०-३०) वेद-मन्त्र देखे गये हैं, बनाये नहीं। ऐतरेय ब्राह्मण (३-९) से मालूम होता है कि गौरवीत ने सूक्तों वा मन्त्रसमूहों को देखा था। नास्तिक न होते हुए भी नास्तिक समझे जानेवाले सांख्य ने लिखा है—

न पौरुषेयत्वं तत्कर्तुः पुरुषस्याभावात्।

वेद अपौरुषेय हैं, क्योंकि वेदकर्ता का अभाव है। बृहदारण्यक का कहना है—

अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतत् ऋग्वेदो यजुर्वेदः इत्यादि। अर्थात् वेद भगवान् का श्वास है। श्वेताश्वतर ६।८ का कहना है—

यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै।

ब्रह्मा को पहले उत्पन्न कर ईश्वर उनको लोक शिक्षा के लिए वेद देते हैं। स्मृति-ग्रन्थों में भी वेद की नित्यता का समर्थन किया गया है। सायणाचार्य भी वेद को नित्य मानते हैं। मनु महाराज ने कहा है **"सर्वं वेदात् प्रसिद्धयति"** समूची कलाओं और विद्याओं का मूल भी वेद है। वेद के विषय में कहा जाता है "वेद आर्य सभ्यता एवं वैदिक संस्कृति का मूलाधार है। वेद आर्य ज्ञान-विज्ञान का उज्ज्वल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धाम है। वेद सम्पूर्ण आर्ष एवं वैदिक वाङ्मय का प्राण है। वह भक्तिरस की मन्दाकिनी और उच्च गम्भीर विचारों का सुखद आवास है। वेद में ओज, तेज और वर्चस्व की राशि है। वेद ब्रह्मगवी का मान और रणाङ्गण का विहाग है। वेद में दिग्दिगन्त को पावन करनेवाले उदात्त उपदेश हैं। वेद में मानवता-विद्रोहियों में हड़कम्प मचानेवाले अनुपम आदेश हैं। वेद अत्याचारियों, अनाचारियों को ध्वस्त-विध्वस्त करनेवाला आर्यों का ब्रह्मास्त्र है। वेद मानव के समस्त उच्च गुणों की क्रीड़ास्थली है। वेद में आधिभौतिक उन्नति की चरम सीमा है, आधिदैविक अभ्युदय की पराकाष्ठा है, आध्यात्मिक उन्नयन का चूड़ान्त रूप है।" वेद के विषय में मन्त्र कहता है—

ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता सूक्तस्य बोधि तन्वं च जिन्व।
विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥

—यजु० ३४।५८

(हे ब्रह्मणःपते) वेदपालक प्रभो! या ब्रह्माण्डाधिपते (देवाः) विद्वान् (यत्) जिसकी (विदथे) अध्ययन अध्यापनादि-व्यवहार में (अवन्ति) रक्षा करते हैं और (यत्) जिस (बृहत्) श्रेष्ठ का (वयं सुवीराः) हम शोभन वीर (वदेम) उपदेश करते हैं (अस्य) इस (सूक्तस्य) उपदिष्ट वेद के सूक्त का (त्वं) तू (यन्ता) नियामक है, नियमपूर्वक देनेवाला है (च) और (तनयं) पुत्र तुल्य मनुष्यों को इसका (बोधि) तू बोध कराता है। (तत्) उस (भद्रं) कल्याणमय वेद से (विश्वम्) सम्पूर्ण संसार को (जिन्व) तृप्त कर।

एक दूसरे मन्त्र में ईश्वर वेद का प्रवक्ता है, यह बतलाते हुए कहा है—

प्र नूनं ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्रं वदत्युक्थ्यम्।
यस्मिन्निन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा देवा ओकाँसि चक्रिरे॥

—यजु० ३४।५७

(यस्मिन्) जिस परमात्मा में (इन्द्रः) विद्युत्, वायु (वरुणः) जल, चन्द्रमा (मित्रः) प्राण, सूर्य ये सब (देवाः) उत्तम गुणवाले (ओकांसि चक्रिरे) निवास करते हैं। वह (ब्रह्मणः पतिः) वेदरक्षक जगदीश्वर (नूनं) ही (उक्थ्यं) प्रशंसनीय (मन्त्रं) वेद को (प्रवदति) उत्तम रीति से उपदेश करता है।

ईश्वर की यह विमल वाणी मानव का कल्याण करनेवाली है। अथर्ववेद १९।७१।१ में कहा गया है—

स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं, कीर्ति द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्।
मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्।

परमात्मा कहते हैं हे मनुष्यो! तुम्हारे लिए मैंने वरदान देनेवाली वेदमाता की स्तुति कर दी है। वह वेदमाता चेष्टाशील द्विजों को पवित्र करनेवाली है। आयु,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
प्राण, सन्तान, पशु, कीर्ति, धन और ब्राह्मणों के तेज अर्थात् विद्याबलरूप वरों को यह वेदमाता प्रदान करती है। वेदमाता के स्वाध्याय द्वारा प्राप्त होनेवाले इन आयु आदि पदार्थों को (मह्यं) मुझे (दत्त्वा) देकर, इन्हें मदर्पण करके (ब्रह्मलोकम्) मोक्ष को (व्रजत) प्राप्त करो।

वेदमाता ने मनुष्यों को इसलिए उपदेश दिया है कि उन उपदेशों पर चलते हुए आयु, प्राण, सन्तान, पशु, कीर्ति, धन और ब्राह्मणों के तेज अर्थात् विद्याबल-रूप वर इन सात मंगलों को प्राप्त करते हैं। आठवाँ मंगल ब्रह्मलोक की प्राप्ति है। इन पदार्थों का सेवन हमें स्वार्थबुद्धि से नहीं करना चाहिए। इनका सेवन सत्य, न्याय, ज्ञान आदि के द्वारा ईश्वरीय राज्य स्थापित करने के लिए करना चाहिए। इससे हमारा जीवन उपकारमय हो जाएगा। उपकारमय जीवन मोक्ष-प्राप्ति में सहायक होगा।

ईश्वर अजन्मा और अनादि है

ईश्वर अजन्मा अर्थात् जन्म न लेनेवाला है। जो वस्तु जन्म न लेगी, उत्पन्न न होगी अर्थात् जिसका निर्माण नहीं होगा वह अनादि होगी, क्योंकि जन्मवाली वस्तु का आदि होता है। वेद में इन दोनों गुणों का समर्थन किया गया है। ऋग्वेद १।६७।३ में प्रभु को 'अज' कहा गया है। वहाँ आया है—

"अजो न क्षां दाधार पृथिवीं तस्तम्भ द्यां मन्त्रेभिः सत्यैः" अर्थात् न जन्मनेवाला, अजन्मा परमेश्वर न टूटनेवाले विचारों से पृथिवी को धारण करता है। विस्तृत अन्तरिक्ष या द्युलोक अथवा सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों को गिरने से रोकता है।

ऋग्वेद ६।५०।१४ में परमेश्वर को अजन्मा बतलाते हुए उससे प्रार्थना की गई है कि संसार जिसका एक पाद है अर्थात् संसार जिसकी अपेक्षा से अत्यन्त छोटा है, ऐसा (अजः) अजन्मा परमात्मा (नः) हमारी प्रार्थना को सुने। मन्त्र का भाग है—

"उत नोऽहिर्बुध्न्यः शृणोत्वज एकपात् पृथिवी समुद्रः"।

ऋग्वेद ७।३५।१३ में कहा गया है—

शन्नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शन्नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देव गोपा॥

एकपाद अजन्मा परमेश्वर हमारे लिए कल्याणकारी हो, अन्तरिक्ष में होनेवाले मेघ हमारे लिए कल्याणकारी हों, समुद्र सुखदायी हो, पैर न होते हुए भी जलों को पार करनेवाली नौका हमारे लिए सुखकारक हो। सूर्यादि की रक्षा करनेवाला अन्तरिक्ष हमारे लिए सुखकारी हो।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक अन्य मन्त्र में ईश्वर को अनादि बताया गया है। वहाँ आया है—

अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि।
युधेदापित्वमिच्छसे॥

—सा० पू० ५।१।२।१

हे इन्द्र ! तू शत्रुरहित है। तू भी किसी का शत्रु नहीं है (अनापिः) बन्धुरहित है। सब तेरे पुत्र हैं, सबका तू जनक है। (अना) तेरा कोई नेता नहीं, तेरा कोई नौकर नहीं। तू अपने कार्यों में किसी की सहायता नहीं लेता है। (जनुषा सनात् असि) तू जन्म से सनातन है अर्थात् तू जन्मादि से रहित अनादि है, (युधा इत्) उद्योग से ही तू बन्धुता को स्वीकार करता है।

एक अन्य मन्त्र में भी उसे अनादि माना गया है—

वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद् भरन्तोऽवस्यवः।
वज्रिं चित्रं हवामहे॥

—सा० उ० ११।१।२२।१

हे (अपूर्व्य) अनादे परमात्मन् ! (वज्रिन्) पाप को दूर करनेवाले प्रभो ! (अवस्यवः वयम्) रक्षा के अभिलाषी हम (त्वां उ) तुझ ही (चित्रं) विचित्र (स्थूरं) अविनाशी की (हवावहे) कामना करते हैं (न) जिस प्रकार अन्य रक्षाभिलाषी लोग (कच्चित् स्थूरं भरन्तः) किसी महापुरुष का आश्रय करते हैं।

वेदों में भगवान् को प्रादुर्भूत होनेवालों में सबसे पहला माना गया है। यों तो भगवान् सदा से ही प्रादुर्भूत हैं अर्थात् वे अजन्मा और अनादि हैं, अतः उनके प्रादुर्भाव का कोई प्रश्न नहीं। पर फिर भी इस सृष्टि की रचना के साथ उनका एक प्रकार का प्रादुर्भाव होता है। जब तक इस सृष्टि में आकर इसकी आश्चर्य में डाल देनेवाली रचना और व्यवस्था पर मनुष्य विचार नहीं करता तब तक उसे भगवान् की सत्ता और महिमा का अनुभव नहीं होता। इस दृष्टि से सृष्टि की रचना के साथ ही भगवान् जन्म लेते हैं। सृष्टि की रचना के साथ प्रकट होनेवाली सब चीजों में भगवान् सबसे मुख्य है। गुणों, शक्ति और महिमा में सृष्टि की और कोई वस्तु भगवान् की बराबरी नहीं कर सकती।

आइए उस अजन्मा और अनादि प्रभु का गुणगान करें—

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानां, एको बहूनां यो विदधाति कामान्।
तमात्मस्थं ये अनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम्॥

प्रभो ! आप नित्यस्वरूप हैं, चेतनरूप हैं, आप एक हैं, आप भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं। आपको जो लोग अपनी आत्मा में साक्षात् करके देखते हैं उनको वास्तविक तथा निरन्तर शान्ति प्राप्त होती है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वह ईश्वर सबका बन्धु, पिता और सृष्टिकर्ता है

संस्कृत के एक श्लोक में प्रभु की महिमा का वर्णन करते हुए उन्हें अपना पिता, माता, बन्धु, मित्र और सर्वस्व बताया गया है। बृहत्स्तोत्ररत्नाकर के शब्दों में—

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव॥

भगवन्! आप हमारे माता-पिता हैं, आप ही हमारे बन्धु और सखा हैं। स्वामिन्! आप ही हमारे विद्या एवं धन हैं। हे नाथ! आप ही हमारे सर्वस्व हैं और हमारे पूज्य उपास्य देव हैं। आपके स्थान में किसी अन्य का भूलकर भी हम कभी पूजन न करें।

यजुर्वेद अ० ३२ और मन्त्र १० में प्रभु को बन्धु, मित्र और पिता माना गया है—

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त॥

वह परमात्मा हमारा बन्धु, मित्र और सकल जगत् का उत्पादक तथा पालक पिता है। वही विधाता अर्थात् कर्मफलप्रदाता है। सम्पूर्ण लोगों को तथा, उनके नाम, स्थान तथा जन्मों को जानता है। उसी परमात्मा में मोक्ष को प्राप्त होकर मुक्त जीव संसार के सुख-दुःख से रहित नित्यानन्दयुक्त मोक्ष में स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं।

इस मन्त्र में कहा गया है कि परमात्मा हमारा बन्धु है। वही हमारा सच्चा सहायक और मित्र है। गीता ने कहा है—

पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्।
न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव॥

ईश्वर इस चराचर जगत् का पिता है, गुरु से भी बढ़कर गुरु और पूजनीय है। हे अतिशय विभूतिवाले! तीनों लोकों में तेरे समान कोई दूसरा नहीं है, फिर तुझसे बढ़कर कैसे हो सकता है!

यदि मनुष्य ईश्वर को अपना बन्धु, पिता और विधाता समझ ले तो उसे दुःख और क्लेश नहीं हो सकता। फिर तो वह निर्भय और निश्शंक हो जाता है। कैसे? श्री पू० जगदीश्वरानन्द जी द्वारा लिखित एक दृष्टान्त देखिए—

एक समय की बात है एक जहाज समुद्र में जा रहा था कि भयंकर तूफान आने लगा और यान के डूबने का भय उत्पन्न हो गया। जितने व्यक्ति उस यान

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
में बैठे थे सभी रोने और चिल्लाने लगे। परन्तु एक व्यक्ति जो ईश्वर को पिता समझकर प्यार करता था, उसपर विश्वास रखता था, उसे सच्चा बन्धु और पिता मानता था वह बिल्कुल निर्भय था और उसी प्रकार प्रफुल्लित था जैसा तूफान आने से पूर्व। उसका पुत्र जो यान के डूबने और अपने मरने से बहुत डर रहा था, घबराकर और बहुत दुःखी होकर रोता और चिल्लाता था। पिता ने उसे बहुत समझाया पर उसका रोना और चिल्लाना बन्द नहीं हुआ। तब पिता ने उसे फर्श पर गिरा दिया और म्यान से तलवार निकालकर तथा अत्यन्त क्रुद्ध होकर उसकी गर्दन पर रख दी और कहा कि यदि तुमने रोना और चिल्लाना बन्द न किया तो तुम्हारी गर्दन अभी धड़ से पृथक् कर दी जाएगी। पिता के इस कार्य से पुत्र का ध्यान तूफान की ओर से हट गया और उसका भय भी जाता रहा तथा वह खिलखिलाकर हँसने लगा। पिता ने और भी क्रुद्ध होकर कहा "मैं तुम्हारी गर्दन अभी तुम्हारे धड़ से अलग करता हूँ।" परन्तु पुत्र को तब भी भय नहीं हुआ; वह और भी अधिक खिलखिलाकर हँसने लगा। तब पिता ने पूछा क्या तुझे नंगी तलवार से भी डर नहीं लगता ?" पुत्र ने उत्तर दिया कि मुझे डर इसलिए नहीं लगता कि यह तलवार मेरे पिता के हाथ में है, अतः यह मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। तब पिता ने कहा, "इसी प्रकार मुझे भी पूर्ण विश्वास है कि तूफान और मृत्यु मेरे पिता के हाथ में है जो मुझसे प्रेम करता है और मेरा दृढ़ निश्चय और अटल विश्वास है कि तूफान और मृत्यु से मुझे कोई हानि नहीं पहुँच सकती।" श्री स्वामी जी महाराज लिखते हैं "सुख और शान्ति के अभिलाषियो ! आप भी उस प्रभु को अपना सच्चा सखा, बन्धु, पिता, आचार्य और न्यायाधीश मान लो, फिर कैसा दुःख और कैसा शोक ! फिर तो आपके हृदय से एक आवाज निकलेगी—

राजी हैं हम उसी में जिसमें तेरी रजा है।
यहाँ यूँ भी वाह वाह है और वूँ भी वाह वाह है॥

वेद में आया है—

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये॥

ऋ० १।१।९

हे (**अग्ने**) तेजस्वी ईश्वर ! (**सूनवे पिता इव**) पुत्र को जैसे पिता प्राप्त होता है उस प्रकार (**सः**) वह तू (**नः**) हमको (**सु उप आयनः**) उत्तम प्रकार प्राप्त (**भव**) हो और (**नः**) हमारे (**स्वस्तये**) उत्तम कल्याणमय अस्तित्व के लिए (**सचस्व**) हमारे साथ रह।

परमात्मा हमारा पिता है और हम उस परम पिता के 'अमृतपुत्र' हैं। पुत्र का अधिकार है कि वह पिता की गोद में बैठे और निर्भय हो। इसीलिए परम

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
पिता की प्रार्थना की जाती है कि वह हमें पिता के समान प्राप्त होकर सदा हमारे साथ रहकर हमें उन्नति के पथ पर चलाए।

ऋग्वेद १।२६।३ में कहा है—

आ हि ष्मा सूनवे पितापिर्यजत्यापये।
सखा सख्ये वरेण्यः ॥

जिस प्रकार (पिता सूनवे) पिता पुत्र को (आयजति) सहायता देता है, (आपिः आपये) वन्धु वन्धु की सहायता करता है और (वरेण्यः सखा) श्रेष्ठ मित्र अपने (सख्ये) मित्र को सहायता देता है उसी प्रकार हे ईश्वर! तू मेरी (आ स्म) सब प्रकार से सहायता कर।

एक अन्य मन्त्र में बतलाया है—

त्वं हि न पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ।
अधा ते सुम्नमीमहे।

—ऋ० ८।९८।११

हे (वसो शतक्रतो) सबका निवास करने तथा सैकड़ों सत्कृत्य करनेवाले ईश्वर! (त्वं हि नः पिता) तू हम सबका सच्चा पिता है (त्वं) तू ही (माता) माता है (अधा) इसलिए हम सब (ते) तेरा (सुम्नं) उत्तम मनन अर्थात् विचार (ईमहे) करते हैं।

ईश्वर ही सब मनुष्यों का सच्चा पिता, माता, भाई, मित्र आदि है—

अग्निं मन्ये पितरमग्निमापिमग्निं भ्रातरं सदमित्सखायम्।
अग्नेरनीकं बृहतः सपर्यं दिवि शुक्रं यजतं सूर्यस्य ॥

ऋ० १०।७।३

मैं (अग्निं) तेजस्वी ईश्वर को (पितरं) पिता (मन्ये) मानता हूँ और उसी (अग्निं) तेजोमय प्रभु को (आपिं) वन्धु (भ्रातरं) भाई (सदं इत् सखायं) सदा के लिए मित्र (मन्ये) मानता हूँ। इस (बृहतः अग्नेः) इस बड़े तेजस्वी देव के (अनीकं) बल की (सपर्यं) मैं पूजा करता हूँ। इसके प्रभाव से (दिवि) द्युलोक में (सूर्यस्य) सूर्य का (यजतं शुक्रं) पूजनीय पवित्र करनेवाला तेज चमक रहा है।

ईश्वर सभी व्यक्तियों को सुबुद्धि प्रदान करता है, सबको जीवन देनेवाला वही है, इसीलिए सबका पिता वही है और सब उसके सम्बन्धी हैं। वह उत्तम वीर किसी से न दबनेवाला, शक्तिशाली और अपने नियमों का पालन करनेवाला है इसलिए उसके पास सहस्रों प्रकार का धन है—

त्वमग्ने प्रमतिस्त्वं पितासि नस्त्वं वयस्कृत्तव जामयो वयम्।
सं त्वा रायः शतिनः सं सहस्रिणः सुवीरं यन्ति व्रतपामदाभ्यः ॥

ऋ० १।३१।१०

हे तेजस्वी प्रभो! तू विशेष बुद्धिवाला है, तू हमारा पिता है, जीवन देनेवाला है,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हम तेरे बांधव हैं। हे न दबनेवाले ईश्वर। उत्तम वीरों से युक्त और नियम के पालक, तेरे प्रति सैंकड़ों-हजारों धन प्राप्त होते हैं।

भक्तों को प्रभु धन देता है। भक्तों का वह प्रभु पालक पिता है। वेद कहता है—

त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्यां त्वां राय उभयासो जनानाम्।
त्वं त्राता तरणे चेत्यो भूः पिता माता सदमिन्मानुषाणाम्॥

ऋ० ६।१।५

मनुष्य पृथिवी में तुझे बढ़ाते हैं, तेरी महिमा फैलाते हैं, मनुष्यों के दोनों प्रकार के धन भी तेरी महिमा प्रकाशित करते हैं, तू ही तारक है और दुःख से तैर जाने के लिए (चेत्यः) स्मरण करने योग्य तू ही है तथा मनुष्यों का पिता-माता भी सदा तू ही है।

आइए, हम उस प्रभु का गुणगान करें जो हमारा पिता है, जो हमारी माता है, जो हमारी रक्षा करता है, जो हमारा पालन करता है। अन्त में हम उस प्रभु को नमस्कार करते हैं—

नमस्ते सते ते जगत्कारणाय,
नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय,
नमोऽद्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय,
नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय।

हे सदा रहनेवाले, जगत् के कारण प्रभो! तुझे नमस्कार हो। सर्वलोक के आश्रय, चेतनस्वरूप! तुझे प्रणाम हो। सुखस्वरूप, मुक्ति के दाता! तुझे हम नमस्कार करते हैं। हे सर्वव्यापक परब्रह्म! तुझे हमारा बार-बार प्रणाम हो।

ईश्वर की उपासना करनी चाहिए

स्तुति, प्रार्थना, उपासना ये तीन शब्द अलग-अलग भाव बतलाते हैं। 'सत्यार्थप्रकाश' में स्वामीजी महाराज ने तीनों शब्दों को समझाया है और लिखा है कि स्तुति में ब्रह्म के गुणों का गान किया जाता है, प्रार्थना में ब्रह्म से सद्गुणों, साहस, बुद्धि तथा बल की याचना की जाती है तो उपासना में ब्रह्म से मेल किया जाता है तथा उसका साक्षात्कार किया जाता है। सन्ध्या में हम प्रतिदिन उपस्थान-मन्त्रों से प्रभु के निकट जाने का यत्न करते हैं। उपस्थान शब्द का अर्थ है, समीप बैठना। उपासना शब्द का भी यही अर्थ है। भक्त अब भगवान् के समीप बैठता है; यम, नियम, धारणा, ध्यान और जप-तप के द्वारा मनुष्य अपने प्रभु के बहुत अधिक समीप पहुँच गया है। सन्ध्या में उपस्थानमन्त्रों से पहले व्यक्ति आत्म-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

निरीक्षण, मार्जन, अघमर्षण तथा मनसा-परिक्रमा के द्वारा ऐसा प्रयत्न करता है कि परमात्म-तत्त्व से उसकी एकता हो जाए, वह उसके समीप पहुँच जाए। शक्ति के समुद्र उस भगवान् के समीप पहुँचते ही जीवात्मा की शक्तियाँ विकसित और महान् बनती हैं। पानी की नन्हीं बूंद अपने-आप में तुच्छ, अशक्त, सीमित, क्षणिक और अनुपयोगी है, परन्तु यही नन्हीं बूंद जब विशाल समुद्र में गिरकर समुद्र के जल के साथ अपने को मिला देती है तो समुद्र के स्वभाव, शक्ति और विशालता को प्राप्त कर लेती है। इसी प्रकार मनुष्य की शक्तियाँ भी तुच्छ एवं सीमित हैं परन्तु उपासना या ब्रह्म-सामीप्य या ब्रह्म-मिलन द्वारा महान् प्रभु से निकट सम्बन्ध स्थापित कर लेने पर मनुष्य की शक्तियों की योग्यता बढ़ जाती है तथा उसे नई-नई शक्तियों का अनुभव होता है। अरविन्दाश्रम की माताजी ने उपासना के विषय में लिखा है, "आध्यात्मिक जीवन अथवा योग के अभ्यास का उद्देश्य दैवीय चैतन्यता जाग्रत् करना है। दैवीय चैतन्यता जाग्रत् करने का परिणाम मनुष्य की शक्तियों का पवित्र, महान्, यशस्वी तथा पूर्ण होता है।"

उपासना की स्थिति बड़ी आनन्ददायिनी है। उसके विषय में उपनिषत्कार ने लिखा है—

समाधिनिर्धूतमलस्य चेतसो निवेशितस्यात्मनि यत्सुखं भवेत्।
न शक्यते वर्णयितुं गिरा तदा स्वयं तदन्तःकरणेन गृह्यते।।

समाधियोग से जिस पुरुष के अविद्यादि मल नष्ट हो गये हैं, आत्मस्थ होकर जिसने परमात्मा में अपना ध्यान लगाया है, अपने परिश्रम, तप और साधना से जो शिखर पर पहुँच गया है और वहाँ पहुंच जो अद्भुत दृश्य देख रहा है, भगवान् की क्रीड़ास्थली का दर्शन कर रहा है, वह समीपता की अनुभूति ही उपासना है। उस सामीप्य की अनुभूति से जो सुख या आनन्द भक्त को होता है, वह वाणी से नहीं कहा जा सकता, वह तो अनुभव की वस्तु है। सूरदास ने ठीक ही कहा है—

अविगत गति कछु कहत न आवे।
ज्यों गूंगहि मीठे फल को रस
अन्तरगत ही भावै।
परम स्वाद सब ही को निरन्तर
अमित तोष उपजावै।
मन वानी को अगम अगोचर,
जो जानै सो पावै।

इस उपासना की स्थिति तक पहुँचने के लिए १. यम २. नियम ३. आसन ४. प्राणायाम ५. प्रत्याहार ६. धारणा ७. ध्यान और ८. समाधि आठ अंग हैं। इनका पालन और अभ्यास करना चाहिए। स्वामीजी महाराज ने लिखा है, "जब उपासना करना चाहें तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर आसन लगा, प्राणायाम कर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बाह्य-विषयों से इन्द्रियों को रोक, मन को नाभिप्रदेश या हृदय, कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड़ में किसी स्थान पर स्थिर करके अपने आत्मा और परमात्मा का विवेचन करके परमात्मा में मग्न हो जाने से संयमी होवें। जब इन साधन कों कोरता है, तब उसका आत्मा और अन्तःकरण पवित्र होकर सत्य से पूर्ण हो जाता है जो आठ प्रहर में घड़ी-भर भी इस प्रकार ध्यान करता है वह सदा उन्नति को प्राप्त करता है।" इसलिए हमें ईश्वर की उपासना करनी चाहिए। वेद के एक मन्त्र में यह बतलाया गया है कि उपास्यदेव कैसा हो—

स हि क्रतुः स मर्यः स साधुर्मित्रो न भूदद्भुतस्य रथीः।
तं मेधेषु प्रथमं देवयन्तीर्विश उप ब्रुवते दस्ममारीः॥

—ऋ० १।७७।३

(**सः क्रतुः**) वह कर्ता है (**सः मर्यः**) वह मारक अर्थात् संहारक है, (**सः साधुः**) वह साधक अर्थात् धारक है, वह (**मित्रः न**) मित्र के समान (**अद्भुतस्य रथीः**) अद्भुत सृष्टि को रथ बनाकर उसपर आरूढ़ होनेवाला है (**मेधेषु प्रथमं तम्**) यज्ञों में, मेधा बुद्धि के कर्मों में पहला देव वही है (**दस्म**) उस दर्शनीय को (**देवयन्तीः आरीः विशः**) देवता बनने की इच्छा करनेवाले प्रगतिशील प्रजाजन (**उपब्रुवते**) उपासना करते हैं।

इस मन्त्र का भाव है कि परमेश्वर संसार का रचयिता, धर्ता और नाशक है। जो मनुष्य उस दिव्य शक्ति से एकता स्थापित करना चाहते हैं उन्हें उसकी उपासना करनी चाहिए।

संसार में हमें जितने कष्ट, दुःख और चिन्ताएँ सताती हैं उनका कारण हमारी ईश्वर से दूर हटने की भावना है जिससे हम इस संसार में अपने को दुःखी, चिन्तित, निराश्रित और एकाकी अनुभव करते हैं। जो ईश्वर को अपना पालक और धारक समझता है और जिसे उसके रुद्ररूप का, जो दुष्टों को रुलाता है, विश्वास रहता है, वह सब प्रकार की निराशाओं और कष्टों से ऊपर उठ जाता है। ऐसा मनुष्य जीवन की प्रत्येक असफलता को सफलता में बदलने के लिए सचेष्ट रहता है, संघर्ष को उन्नति की सीढ़ी बनाता है। वह संसार की सम्पूर्ण परिस्थितियों पर विजय प्राप्त कर लेता है। सर्वशक्तिमान् प्रभु के सामीप्य से उसकी शक्तियाँ दुगुनी हो जाती हैं और वह सोचने लगता है कि मेरे ऊपर उस सच्चिदानन्द प्रभु का वरदहस्त है जो अनादि-अनन्त है, अतः मुझे घबराने की आवश्यकता नहीं। वह प्रभु के उपास्य रूप से अपने को शक्तिशाली बना लेता है। प्रभु की उपासना से हमें साहस, बल और शक्ति प्राप्त भी क्यों न होगी? वह है भी तो सबसे अधिक व्यापक, सबसे अधिक प्रभावशाली और सबका सच्चा पालक। वेद ने कहा है—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इन्द्रं विश्वा अवीवृधन्त्समुद्रव्यचसं गिरः।
रथीतमं रथीनां वाजानां सत्पतिं पतिम् ।।

—ऋ० १।११।१

(समुद्रव्यचसं) समुद्र के समान विस्तृत (रथीनां रथीतमं) वीरों में श्रेष्ठ वीर (वाजानां पतिं) बलों के स्वामी (सत्पतिं) सबके सच्चे पालक (इन्द्रं) प्रभु को (विश्वा गिरः) सब स्तुतियाँ (अवीवृधन्) बढ़ाती हैं, उसकी प्रशंसा करती हैं। इसीलिए तो उसके समीप हमें पहुँचना चाहिए। जब हम उसके समीप पहुँच जाएँगे उस समय संसार की कोई विपत्ति या दुःख हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा। ऋग्वेद में कहा गया है—

इन्द्रश्च मृळयाति नो न नः पश्चादघं नशत् ।
भद्रं भवाति नः पुरः ।।

ऋ० २।४१।११

जब वह शक्तिशाली भगवान् हमारे ऊपर दयालु होता है, तो पाप हमारे पीछे नहीं पहुँचता, पाप हमारा पीछा नहीं करता और भलाइयाँ हमारे आगे-आगे विद्यमान रहती हैं।

मैं आपको यह बतलाना चाहता हूँ कि उपासना उस बलिष्ठतम प्रभु की उपासना हमारी परिस्थितियों में आमूल परिवर्तन कर देती है। आपने सुना होगा कि बहुत-से मनुष्य कहा करते हैं कि उपासना इसलिए एक अच्छी वस्तु है कि उससे मनुष्य में कठिनाइयों और विपत्तियों का सामना करने के लिए हिम्मत और बल प्राप्त होता है। उनका यह भी विचार है कि उपासना मनुष्य में आत्म-विश्वास उत्पन्न करती है और वह विपदाओं से निकल और बच जाता है। पर हम आपसे कहेंगे कि उपासना—सच्ची उपासना—जिसमें कठिनाई में भी ईश्वर ही दिखाई देता है, हमें कठिनाई से मुकाबला करने का बल ही नहीं देती बल्कि कठिनाई की जगह सुख ला देती है। उपासना एक परिस्थिति के बदले दूसरी परिस्थिति लाकर उसे बदल देती है। उपासना हमारे स्वभाव को बदलकर हमें सन्तोष और सुख देती है। उपासना मनुष्य को सफलता के नये रास्ते बताती है, वह केवल पुरानी राह की मरम्मतभर नहीं करती है। शरीर, परिस्थितियाँ, संसार हमारे विचारों के आधार पर बनते हैं, उनका रूप हमारे विश्वास के अनुरूप होता है और यह उपासना हमारे विचारों को उच्च, दृढ़ और संकल्पवान् बनाती है। ईश्वर ने आपको बुद्धि दी है। उपासक की बुद्धि ईश्वरीय प्रेरणा से परिपूर्ण हो जाती है और वह बुद्धि का सफलतापूर्वक उपयोग करता है, यही उसकी सफलता का रहस्य है।

उपासना का लाभ हमें यह होता है कि प्रभु के अपने समीप होने और उसके शक्तिशाली स्वरूप की अपने में स्थिति होने से हममें एक आत्मविश्वास उत्पन्न

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

होता है। यह आत्मविश्वास ही हमें प्रभु के समीपतम ले आता है और यह आत्म-विश्वास वह शक्ति है जो पहाड़ों को उखाड़ फेंकती है। यह आत्मविश्वास वह महामन्त्र है, जिसकी सहायता से अजेय दुर्ग जीते जा सकते हैं, दुर्गम जंगलों और सूखे रेगिस्तानों को पार किया जा सकता है, बड़े-बड़े आविष्कार किये जा सकते हैं, अलभ्य वस्तुएँ प्राप्त की जा सकती हैं। हमें इंगलैण्ड के एक यहूदी प्रधान मन्त्री का जीवन स्मरण आ रहा है जिसका नाम था बैंजमन डिजराइली। यह यहूदी था। इसे किसी विश्वविद्यालय की उच्च पदवी प्राप्त न थी, इसका जन्म किसी बहुत बड़े समृद्ध परिवार में नहीं हुआ था। उस समय इसके यहूदी होने के कारण इंगलैण्ड की जनता भी इसे घृणा की दृष्टि से देखती थी। एक लार्ड मैलवोर्न से इसकी वातचीत हुई और इसने उसे वताया कि वह एक दिन इंगलैण्ड का प्रधान-मन्त्री वने बिना न रहेगा। उस समय इंगलैण्ड में किसी यहूदी के प्रधान मन्त्री वनने की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था, अतः उसने इसे समझाया। पर, ऐसा व्यक्ति जो प्रभु में विश्वास कर और लक्ष्य सामने रखकर चलता है, कभी अपने निश्चय से विरत नहीं हो सकता। अनेक बार संसद् का चुनाव हारने के वाद, एक बार वह सफल हुआ। उसके बाद भी संसद् में सदस्य उसके भाषण को सुनने को तैयार न हों, उसे अपना भाषण बीच में रोकना पड़ता था। पर, एक दिन वह इंगलैण्ड का प्रधानमन्त्री वनकर रहा।

वास्तव में मनुष्य अपनी ठीक-ठीक शक्ति को तव तक प्राप्त नहीं कर सकता जवतक कि वह इस बात को मन, वचन और काया से न समझ ले कि वह विश्व के महान् तत्त्व प्रभु की छाया या शरण में है। **'यस्य छायाऽमृतम्'** जिसकी छाया अमृत है। यही छाया अमृत है। यह छाया उपासना से प्राप्त होती है। उपासना ईश्वर के साथ हमारा इतना गहन सम्बन्ध जोड़ देती है कि चारों ओर हमें वही दिखाई देने लगता है। उसके गुण हमें घेर लेते हैं। उस समय हमारी कमजोरी, संकीर्णता, भीरुता, सन्देह हमसे विदा हो जाते हैं और उस समय हमें आत्मिक शक्ति प्राप्त हो जाती है। परमात्मा ही इस शक्ति का उद्गम है। यह शक्ति ही जीवन की सफलता का मार्ग प्रशस्त करती है। इसीलिए यह मन्त्र कहता है कि जव वह शक्तिशाली भगवान् हमपर दयालु होता है, तव पाप हमसे दूर हो जाते हैं।

एक मन्त्र में प्रभु से कहा गया है—

त्वमग्ने राजा वरुणो धृतव्रतस्त्वं मित्रो भवसि दस्म ईड्यः।
त्वमर्यमा सत्पतिर्यस्य सम्भुजं त्वमंशो विदथे देव भाजयुः॥

ऋ० २।१।४

हे (देव) देव ! (अग्ने) प्रकाशस्वरूप (त्वं) तू ही (राजा वरुणः) राजा वरुण है, तू ही (धृतव्रतः) नियमों का धारण करनेवाला है, (त्वं) तू (दस्म) दर्शनीय और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(**ईड्यः**) स्तुत्य (**मित्रः भवसिः**) मित्र है, (**त्वं**) तू ही (**सत्पतिः अर्यमा**) सज्जनों का पालक न्यायकारी है। (**यस्य**) जिसका (**सम्भुजं**) दान सर्वत्र है, (**त्वं**) तू (**अंशः**) अंश नामक देव है, जो (**विदथे**) यज्ञ में (**भाजयुः**) पूजनीय होता है।

इस मन्त्र में परमेश्वर को नियमों का धारण करनेवाला बतलाया गया है, और उसके बाद उसे दर्शनीय बतलाते हुए उसकी उपासना का उपदेश दिया गया है। इसके बाद उसकी विशेषता बतलाते हुए उसे मित्र, सज्जनों का पालक और न्यायकारी कहा गया है। इन गुणों के कारण उसकी उपासना करनी चाहिए। प्रश्न उत्पन्न होता है कि परमेश्वर नियमों का धारण करनेवाला कैसे है? यदि वह सर्वशक्तिमान् है, तो उसे नियम धारण करने की क्या आवश्यकता है? सत्यार्थप्रकाश में स्वामीजी महाराज ने इसी प्रकार के प्रश्न का उत्तर देते हुए लिखा है, 'सर्वशक्तिमान् शब्द का अर्थ है कि ईश्वर अपने काम अर्थात् सृष्टि-उत्पत्ति, पालन, प्रलय आदि और सब जीवों के पुण्य-पाप की यथायोग्य व्यवस्था करने में किंचित् भी किसी की सहायता नहीं लेता अर्थात् अपने अनन्त सामर्थ्य से ही अपना काम पूर्ण कर लेता है।' इसपर प्रश्नकर्त्ता उनसे पूछता है—'हम तो ऐसा मानते हैं कि ईश्वर चाहे सो करे, क्योंकि उसके ऊपर दूसरा कोई नहीं है।' स्वामीजी महाराज इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि—हम तुमसे पूछते हैं कि वह क्या चाहता है? जो तुम कहो कि वह सब-कुछ चाहता और कर सकता है तो हम तुमसे पूछते हैं परमेश्वर अपने को मार, अनेक ईश्वर बना, स्वयं अविद्वान्, चोरी, व्यभिचारादि पापकर्म कर और दुःखी भी हो सकता है? जैसे ये काम ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव से विरुद्ध हैं, तो जो तुम्हारा कहना है कि वह सब-कुछ कर सकता है, वह कभी नहीं घट सकता अर्थात् परमेश्वर भी अपने बनाये नियमों को तोड़ नहीं सकता।' इसलिए प्रभु के उपासक को अपने नियमों के पालन में सदा तत्पर रहना चाहिए। जो अपने नियमों का पालन करता है, जीवन के विकास का मार्ग उसके लिए खुलता चला जाता है। वह अपने मार्ग पर आगे बढ़ता चला जाता है।

प्रभु दर्शनीय है—सुन्दर है। जीवात्मा उसके सौन्दर्य पर मुग्ध हो जाता है। उसे जब प्रभु के उस सुन्दर स्वरूप का दर्शन हो जाता है, तब जीवात्मा न जाने किस बाँसुरी के दिव्य स्वरों के संस्पर्श से पुलकित हो जाती है। निराला भी कहते हैं—

हृदय में कौन जो छेड़ता बाँसुरी?
हुई ज्योत्स्नामयी अखिल मायापुरी।
लीन स्वरसलिल में मैं बन रही मीन।
स्पष्ट ध्वनि आ धनि सजी यामिनी भली।

प्रियतम, सुन्दरतम ब्रह्म के आह्वान पर प्रेयसी आत्मा अभिसार के पथ पर चल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पड़ती है। उसके सौन्दर्य के सामने सांसारिक मोहजाल, लोकलाज बनकर उसके पैरों को पीछे खींचते हैं, पर प्रियतम के चरणों के सिवा अन्यन्त्र शरण ही कहाँ है ?

> और मुखर पायल स्वर करें बार-बार।
> प्रियपथ पर चलती सब कहते शृंगार।
> शब्द सुना हो तो अब लौट कहाँ जाऊँ ?
> उन चरणों को छोड़ और शरण कहाँ पाऊँ ?

महादेवी वर्मा ने कहा है, जीवात्मा जब परमात्मा के सौन्दर्य को देख उससे नाता जोड़ लेता है, तब वह उपासना के चरमलक्ष्य को प्राप्त कर लेता है, और वह कह उठता है—

> मैं तुममें हूँ एक, एक है जैसे रश्मि-प्रकाश,
> मैं तुमसे हूँ भिन्न-भिन्न ज्यों घन से तड़ित-विलास।

संसार की वस्तुओं में जो सौन्दर्य है, जो चेतना है, वह सब उस प्रभु का ही रूप है। हम समझ नहीं पाते, हम उसे दूर ही दूर अनुभव करते हैं। पर, जब हम प्रभु की दिव्य दृष्टि की एक चितवन देख लेते हैं, उस समय उसको जानने की इच्छा प्रबल हो उठती है, उस समय प्रत्येक सहृदय व्यक्ति के मन में इस रहस्यमय जगत् की सुन्दरता देखकर, अद्भुत भावनाएँ उठा करती हैं। रात्रि के रहस्यमय नक्षत्रों को देखकर मेघों के गर्जन में तड़ित् की छवि को देखकर, समुद्र की उठती हुई तरंगों को देखकर हमें विस्मय होता है कि न जाने कौन-सी अज्ञात सत्ता उसे अपने समीप बुला रही है, और उसका परिचय पाने के लिए कविवर पन्त के शब्दों में उसकी आत्मा कह उठती है—

> न जाने कौन अये द्युतिमान, जान मुझको अबोध अज्ञान,
> सुझाते हो तुम पथ अनजान, फूंक देते छिद्रों में जान,
> अहे सुख दुःख के सहचर मौन, नहीं कह सकती तुम हो कौन ?

और जब वह उसके समीप पहुँचता है, तो उसे अपने प्रियतम के दर्शन हो जाते हैं, और वह कह उठता है—

> कभी उड़ते पत्तों के साथ, मुझे मिलते मेरे सुकुमार।
> बढ़ाकर लहरों से निज हाथ, बुलाते फिर मुझको उस पार।

यह ईश्वर संसार का धारण करनेवाला है, इसलिए हम उसकी अनेक रूपों में प्रशंसा करते हुए नमनपूर्वक उपासना करते हैं, और आशा करते हैं कि वह अपने तेजों से हमें तेजस्वी करेगा, और हमें मानवीय यश से सुशोभित करेगा। ऋग्वेद ५-८-४ मन्त्र में कहा गया है—

> त्वामग्ने धर्णसिं विश्वधा वयं गीर्भिर्गृणन्तो नमसोप सेदिम।
> स नो जुषस्व समिधानो अंगिरो देवो मर्तस्य यशसा सुदीतिभिः॥
> —ऋ० ५।८।४

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हे तेजस्वी ईश्वर ! सबके धारक ! तुझे हम उपासक अनेक प्रकार की वाणी से प्रशंसा करते हुए नमस्कार से उपासना करते हैं। हे प्राणों के प्राण ! वह तू प्रकाशमान देव मनुष्य को यश से युक्त करके उत्तम तेजों के साथ हमपर प्रीति कर।

ऋग्वेद के एक अन्य मन्त्र में उपासना के लाभ बताते हुए कहा गया है कि जो व्यक्ति परमेश्वर के गुणों का वर्णन करने से अपनी वाणी की शोभा बढ़ाते हैं, वे सब धनों से युक्त होते हैं। वे विशेष वलों को प्राप्त करके ऐसे महान् कार्य करते हैं कि उनकी कीर्ति दिगन्त में पहुँच जाती है, और वे लोग स्वयं ही अपनी आत्मिक ज्ञानशक्ति से सब बातें यथावत् जान लेते हैं। मन्त्र है—

ये अग्ने चन्द्र ते गिरः शुम्भन्त्यश्वराधसः।
शुष्मेभिः शुष्मिणो नरो दिवश्चिद्येषां बृहत्सुकीर्तिर्बोधति त्मना ।।

—ऋ० ५।१०।४

अर्थात्—हे आह्लाददायक तेजस्वी ईश्वर ! जो मनुष्य तेरी स्तुतियों से शोभा पाते हैं, वे अश्व आदि धनों से सिद्ध होते हैं। वे मनुष्य बलवान् होकर अपने बलों से ऐसे शुभ कर्म करते हैं, जिससे उनका यश द्युलोक से बड़ा हो जाता है तथा इस प्रकार का मनुष्य स्वयं सब-कुछ जानता है।

परमेश्वर के उपासक को सब प्रकार के धन, यश और बल प्राप्त होते हैं। भीखा साहब ने कहा है—

भजन ते उत्तम नाम फकीर,
छमा सील संतोष सरलचित,
दरदवन्त पर-पीर।

परमेश्वर की उपासना का मतलब है, उसके गुणों को अपने में धारण करना। धारण करनेवाला सब प्रकार के ऐश्वर्य प्राप्त करता है। धारण करने का तात्पर्य है कि फकीर नाम की श्रेष्ठता तो केवल भजन के कारण है, मगर फकीर कैसा ? जो क्षमाशील हो, संतोषी हो, सरलचित्त हो, जो दूसरों के दुःख-दर्द को जानता हो, दूसरों की पीर को पहचानता हो।

नानकदेव ने कहा है कि उपासक वही हो सकता है, भगवान् उसी के पास वसते हैं, जिसने पर-धन और पर-स्त्री का त्याग कर दिया है—

परधन परदारा परिहरी,
ताके निकट बसे नरहरी।

'दरिया' साहब का कहना है कि वही सच्चा उपासक है, वही सच्चा सन्त है, जिसके दिल में कपट नहीं, पक्षपात नहीं, बाहर और भीतर जिसका रूप एक है। फिर वह व्यक्ति चाहे गृहस्थ हो, चाहे वेषधारी साधु—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

'दरिया' लच्छन साधु का, क्या गिरही क्या भेख।
निष्कपटी निरपच्छ रही, बाहर भीतर एक॥

कबीरदास ने सच्चे प्रभुभक्त साधु या उपासक को लक्ष्य रखकर बताया है कि वही व्यक्ति परमेश्वर का प्रिय है—

साध संतोषी सर्वदा, निर्मल जाके वैन,
ताके दरस रु परस तें, जिय उपजै सुख-चैन।

जिसकी आत्मा में सदा संतोष-ही-संतोष है, जिसके वचन निर्मल, निर्विकार हैं, वही सच्चा साधु है, उसका दर्शन और स्पर्श करते ही हृदय में आनन्द का स्रोत उमड़ पड़ता है।

'दादूदयाल' ने तो यहाँ तक कहा है—

हरिभज साफल जीवना, पर उपकार समाइ,
'दादू' मरना तहँ भला, जहँ पसु-पंछी खाई।

अर्थात् जीवन सफल तो तब है कि जब तक जीवित रहे, हरि का भजन करता रहे और परोपकार में अपने मन को पिरो दे, और जब मरे तो ऐसी जगह मरे कि किसी को पता भी न चले, शरीर पशु-पक्षियों के खाने के काम आ जाय।

जिहिं घट दीपक ईश का, तिहिं घट तिमिर न होइ।
उस उजियारे जोति के, सब जग देखै सोइ॥

जिस घट के अन्दर ओ३म् का दीपक जल रहा है, वहाँ अज्ञान-अन्धकार प्रवेश नहीं करता। उस परमज्योति के प्रकाश में सारा जगत् दृष्टिगोचर होता रहता है।

फिर कहते हैं—

सोइ जन साधू, सिद्ध सो, सोइ सकल सिरमोर।
जिहिं के हिरदै हरि बसै, दूजा नाहीं और॥

जिसके हृदय में केवल भगवान् का वास है, दूसरी किसी वस्तु के लिए स्थान ही नहीं—वही भक्त है, वही साधु है, वही सिद्ध है और वही सबमें सिरमौर है।

इतिहास के उदाहरण उठाकर देखिए। आपको पता लगेगा कि शरीर और आत्मा की इच्छाओं में महान् अन्तर होता है। संसार के सिरमौर पुरुषों की अभिलाषाएँ वास्तव में ईश्वरीय प्रेरणा का फल हैं। ये अभिलाषाएँ उनके मन का द्वार खोल देती हैं और वे कठिनाइयों को पार कर संसार को कुछ दे जाते हैं। मनुष्य को प्रगतिपथ पर आगे बढ़ानेवाली वह विलक्षण शक्ति ईश्वर की प्रेरणा है, जो सृष्टि की प्रत्येक वस्तु को सदा ही आगे की ओर बढ़ाती जाती है। जिस मनुष्य के हृदय में ईश्वरीय प्रेरणा उठती होगी वह मनुष्य आत्मशक्ति प्राप्त करेगा। आत्मशक्ति उसे साहस, बल या शक्ति देगी। यह शक्ति, यह विश्वास

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उसके सामने जीवन में समाज, धर्म, नीति तथा विज्ञान के क्षेत्र में नई प्रेरणा देंगे, और वह अद्भुत कार्य कर समाज का सिरमौर हो जाएगा। 'गोडियर' रबड़ का आविष्कारक बनने से पूर्व संसार में कुछ कर दिखाना चाहता था। उसे ईश्वरीय प्रेरणा थी कि तुम कुछ करने को आये हो और वह सफल हुआ। साइरूस डब्लु. फील्ड के मन में समुद्री तारों की एक अद्भुत कल्पना थी। यदि वह निराशाओं के बावजूद उस कल्पना को आगे न बढ़ाता तो संसार के बड़े-बड़े देश भी बेतार के तार से वंचित रहते। मारकोनी के सपनों के बिना शायद टेलीफोन का आविष्कार एक शताब्दी और रुक जाता। अलैक्जैण्डर ग्राहमबेल ने कठिनाइयों को सहते-सहते अपने कदम न बढ़ाये होते तो टेलीफोन का लाभ हम न उठा पाते। सिलाई की मशीन की कल्पना यदि हलियस हीव ने न की होती तो क्या हम घरों पर अपने कपड़े सिलवा सकते? यदि लिंकन ने ईश्वर पर विश्वास करके स्वतन्त्रता की आवाज न बुलन्द की होती तो क्या अमरीका इतना उन्नत हो पाता? इसलिए जीवन में आगे बढ़ने और सफलता प्राप्त करने के लिए ईश्वर की भक्ति करो, उपासना करो, उससे आत्मिक शक्ति और प्रेरणा मिलेगी, और उससे जीवन में सफलता भी। मुण्डक उपनिषद् में प्रभु की महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है—

बृहच्च तद् दिव्यमचिन्त्यरूपं सूक्ष्माच्च तत् सूक्ष्मतरं विभाति।
दूरात् सुदूरे तदिहान्तिके च पश्यत्स्विहैव निहितं गुहायाम्॥

—मुण्डक ३।१।७

वह महान् है, दिव्य है, अचिन्त्यरूप है, और सूक्ष्म-से-सूक्ष्मतर प्रतीत होता है। दूर से अधिक दूर है, तथापि वह हमारे निकट है। देखनेवालों के अन्दर वह यहीं हृदय की गुफा में छिपा हुआ है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् ने और भी बल देते हुए प्रभु के गुणों का वर्णन किया है और उसकी उपासना की शिक्षा दी है—

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेताः केवलो निर्गुणश्च॥

—श्वेता० ६।११

वह देव एक है। सभी प्राणियों एवं वस्तुओं में छिपा हुआ है, सर्वव्यापक है, सब भूतों का अन्तरात्मा है, कर्मों का अधिष्ठाता है, वह भूतों का आधार है, साक्षी है, चेतन है, केवल है और निर्गुण है।

इसी उपनिषद् में कहा गया है, बस उसी को जानो, वही उपनिषदों का परम रहस्य है—

सर्वव्यापिनमात्मानं क्षीरे सर्पिरिवार्पितम्।
आत्मविद्यातपोमूलं तद् ब्रह्मोपनिषत् परम्॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation Chennai

वह सर्वव्यापी परमात्मा दूध में मक्खन की तरह सारे विश्व में समाया हुआ है। 'आत्मविद्या' और 'तप' उसकी प्राप्ति के मूल हैं। वह ब्रह्मोपनिषद् का परम रहस्य है।

कवि के शब्दों में हम कहेंगे—

वही अचेतन इस शरीर में, एक चेतनामय है।
वही विनश्वर विश्वजगत् में, अमृतरूप अक्षय है।
वही काव्यमय है, सुन्दर है, सर्वशक्तिसम्पन्न महान्।
प्रेमभाव से सीस नवाकर करते सब उसका ही ध्यान।
रूठ जाए दुनिया, तुम केवल बने रहो मेरे स्वामी।
मैं तुममें तुम मुझमें लय हो रमे रहो अन्तर्यामी।

□

Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद-मीमांसा

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती

पाश्चात्य विद्वानों ने वेद के विकृत रूप को प्रचारित करने का षड्यन्त्र किया। तरह-तरह की भ्रान्तियां हमारे भारतीय विद्वानों ने भी प्रसारित कीं। आर्यसमाज की ओर से युक्तियुक्त उत्तर समय-समय पर दिये जाते रहे।

सभी प्रकार की भ्रान्त धारणाओं को दूर कर वेद के यथार्थ स्वरूप से अवगत कराने के उद्देश्य से ही इस वेद-मीमांसा की रचना विद्वान् लेखक ने सूत्र की शैली में करके उसका भाष्य किया है।

मूल्य ५०.००

पुस्तक पर महत्वपूर्ण सम्मति—

वेद-मीमांसा का वैशिष्ट्य शब्दों द्वारा दर्शा सकना सम्भव नहीं है। उसके आद्योपान्त मनन द्वारा ही उसका महत्व जाना जा सकता है। ग्रन्थकार के व्यापी अनुसन्धान और गम्भीर वैदुष्य की छाप प्रत्येक विषय के प्रतिपादन में पाई जाती है।

—वेदभाष्यकार प्रो० विश्वनाथ विद्यामार्त्तण्ड

जब प्रकृति की अनमोल दवाइयाँ आपको आसानी से उपलब्ध हैं तो—गोली, पुड़िया, कैप्सूल या इन्जेक्शन की क्या जरूरत है ?

घर का वैद्य

लेखक—सुनील शर्मा

१. घर का वैद्य आंवला ३.५०
२. घर का वैद्य नीम ३.५०
३. घर का वैद्य गन्ना ३.५०
४. घर का वैद्य प्याज ३.५०
५. घर का वैद्य लहसुन ३.५०
६. घर का वैद्य नीबू ३.५०
७. घर का वैद्य तुलसी ३.५०
८. घर का वैद्य पीपल ३.५०
९. घर का वैद्य आक ३.५०
१०. घर का वैद्य सिरस ३.५०
११. घर का वैद्य दूध-घी ३.५०
१२. घर का वैद्य दही-मट्ठा ३.५०
१३. घर का वैद्य नमक ३.५०
१४. घर का वैद्य हल्दी ३.५०
१५. घर का वैद्य हींग ३.५०
१६. घर का वैद्य बेल ३.५०
१७. घर का वैद्य बरगद ३.५०
१८. घर का वैद्य मूली ३.५०
१९. घर का वैद्य गाजर ३.५०
२०. घर का वैद्य अदरक

बीसों पुस्तकें चार सुन्दर जिल्दों में १४०.००

गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली-११०००६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

महामुनि कृष्णद्वैपायन व्यासजी प्रणीत

महाभारतम्

महाभारत धर्म का विश्वकोश है। व्यासजी महाराज की घोषणा है कि जो कुछ यहाँ है, वही अन्यत्र है, जो यहाँ नहीं है वह कहीं नहीं है। इसकी महत्ता और गुरुता के कारण इसे पञ्चम वेद कहा जाता है।

वेद को छोड़कर सभी वैदिक ग्रन्थों में प्रक्षेप हुए हैं। महाभारत भी इस प्रक्षेप से बच नहीं सका। महाभारत की श्लोक संख्या बढ़कर एक लाख पहुँच गई है। इसमें असम्भव गप्पों, अश्लील कथाओं, विचित्र उत्पत्तियों अप्रासाङ्गिक कथाओं को ठूंसा गया। इतने बड़े ग्रन्थ को पढ़ना कठिन हो गया।

आर्यजगत् के ही नहीं भारत के प्रसिद्ध विद्वान्

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

द्वारा तैयार एक विशिष्ट संस्करण।

इस ग्रन्थ में असम्भव, अश्लील और अप्रासांगिक कथाओं को निकाल दिया गया है। लगभग १६,००० श्लोकों में सम्पूर्ण महाभारत पूर्ण हुआ है। श्लोकों का तार-तम्य इस प्रकार मिलाया गया है कि कथा का सम्बन्ध निरन्तर बना रहता है।

☐ यदि आप अपने प्राचीन गौरवमय इतिहास की, संस्कृति और सभ्यता की, ज्ञान-विज्ञान की, आचार-व्यवहार की गौरवमयी झाँकी देखना चाहते हैं,

☐ यदि योगिराज कृष्ण की नीतिमत्ता देखना चाहते हैं,

☐ यदि प्राचीन समय की राज्य-व्यवस्था की झलक देखना चाहते हैं,

☐ यदि आप जानना चाहते हैं कि क्या कौरवों का जन्म घड़ों में से हुआ था? क्या द्रौपदी का चीर खींचा गया था, क्या एकलव्य का अंगूठा काटा गया था, क्या युद्ध के समय अभिमन्यु की अवस्था सोलह वर्ष की थी, क्या कर्ण सूतपुत्र था, क्या जयद्रथ को धोखे से मारा गया आदि

☐ यदि आप भ्रातृप्रेम, नारी का आदर्श, सदाचार, धर्म का स्वरूप, गृहस्थ का आदर्श, मोक्ष का स्वरूप, वर्ण और आश्रमों के धर्म, प्राचीन राज्य का स्वरूप आदि के सम्बन्ध में जानना चाहते हैं, तो एक बार इस ग्रन्थ को पढ़ जाइए।

विस्तृत भूमिका, विषय-सूची, श्लोक-सूची आदि से युक्त इस महान् ग्रन्थ का मूल्य है केवल ४५०) रुपये। तीन भाग।

गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली-६

प्रकाशक-मुद्रक विजयकुमार ने सम्पादित कर अजय प्रिंटर्स, दिल्ली-३२ में मुद्रित करा वेदप्रकाश कार्यालय, ४४०८ नयी सड़क, दिल्ली से प्रसारित किया।

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi